भक्ति सागर

— चन्द्र कुमार गुप्ता

श्रीराम

भक्ति सागर

- चन्द्र कुमार गुप्ता

प्रकाशिका : श्रीमती नीरजा गुप्ता
12/705, इन्दिरानगर, लखनऊ–226 016
मोबाइल : 9415752318

प्रथम संस्करण : प्रतियाँ – 1000

न्योछावर : 25/-

संकलन : इं० चन्द्र कुमार गुप्ता

मुद्रक : प्रिंटिंग कारपोरेशन
14, पुराना गनेशगंज,
लखनऊ

।। श्री राम ।।

निवेदन

यह पुस्तक पाठकों (विशेषकर श्रीराम भक्तों) की सेवा में सर्व समर्थ प्रभु श्रीराम, जगत्गुरु भगवान शिव, माता पार्वती, राम भक्त श्री भरतजी एवं श्री हनुमानजी की कृपा तथा अपने कुछ हितैषी/मित्रों के सहयोग से प्रस्तुत कर रहा हूँ।

पुस्तक का उद्देश्य लोक–कल्याण एवं जन सामान्य को प्रभु श्रीराम की भक्ति / भजन हेतु प्रेरित करना है। मेरा विश्वास है कि पुस्तक सभी धर्म, जाति, वर्ग, सम्प्रदाय एवं पन्थों आदि के लिए हितकर व कल्याणकारी सिद्ध होगी। यदि पुस्तक अपने उद्देश्य में सफल होती है तो मैं अपने को धन्य समझूँगा।

पुस्तक में वस्तुतः मेरा लेशमात्र भी अंशदान नहीं है। मैंने तो, प्रभु श्रीराम के एक तुच्छ सेवक एवं दास के रूप में, श्री तुलसीदासजी द्वारा रचित श्री रामचरित मानस तथा कुछ अन्य लाभकारी पुस्तकों से, अपनी अल्पबुद्धि व अनुभव के आधार पर, कुछ महत्वपूर्ण व लोकहितकारी अंशों को संकलित करने का प्रयास किया है।

मैं न तो लेखक हूँ और न भाषा अथवा व्याकरण का ज्ञाता। ऊपर मैंने स्वयं को अपनी ओर से, प्रभु श्रीराम का तुच्छ सेवक एवं दास कहा है, परन्तु पता नहीं इस योग्य हूँ भी या नहीं। अतः पुस्तक में भाषा/व्याकरण के दोष तथा विषयों/प्रसंगों की पुनरावृत्ति होना स्वाभाविक है। पुस्तक जैसे–तैसे प्रभु श्रीराम व माँ सरस्वती की अनुकम्पा से आपके समक्ष प्रस्तुत करने में समर्थ हो सका हूँ।

पाठकों को यदि कहीं कोई कमी, संशय अथवा भ्रम लगे तो करबद्ध अनुरोध है कि विषय–सूची में दिये गये सन्दर्भ से मूल अंश देखने का कष्ट करें। अपनी इस धृष्टता एवं पुस्तक की त्रुटियों के लिये मैं सभी पाठकों का क्षमा–प्रार्थी हूँ। पुस्तक की उपयोगिता बढ़ाने हेतु सभी पाठकों से सुझावों का स्वागत है।

श्री गणेश चतुर्थी
भाद्रशु० 4.2063

निवेदक
चन्द्र कुमार गुप्ता
12/705, इन्दिरानगर, लखनऊ
मोबाइल : 9415752318

.......मति अनुरूप राम गुन गाऊँ

जब मेरे मित्र इं० चन्द्र कुमार गुप्ता जी ने सहज भाव से वार्तालाप के बीच 'श्री राम भक्ति सागर' की पाण्डुलिपि मेरे समक्ष रख दी तो मैं आवाक् रह गया.....इसलिए नहीं कि श्री गुप्ता जी ने एक चौंकाने वाला काम किया कि वे लिखते–पढ़ते भी हैं बल्कि इस बात ने मुझे सोचने पर विवश कर दिया कि कोई व्यक्ति इतने वर्षों तक डूबकर न केवल रामायण का औपचारिक नियमित पाठ ही करता रहा अपितु भीतर ही भीतर पढ़कर श्रीराम के चरित्र को गुनता भी रहा तथा अपने जीवन में उन्हें उतारने का ईमानदारी भरा सत् प्रयास भी करता रहा। 'श्री राम भक्ति सागर' मेरे उक्त कथन की पुष्टि है– प्रमाण है।

महाकवि गोस्वामी श्री तुलसीदास ने देश–काल–परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मुग़लों के शासन काल में भ्रमित और डरे हुए जन–मानस को एक आदर्श का आधार भगवान श्री राम के रूप में दिया और उस विरले महाकाव्य को सम्पूर्ण विश्व श्री रामचरितमानस के रूप में जानता है। इस ग्रन्थ में सत्–स्वरूप, चित्त स्वरूप और आनन्द स्वरूप तीनों का समन्वित सच्चिदानन्द स्वरूप भगवान श्री राम के विग्रह के रूप में प्रकट हुआ। मर्यादा पुरुषोत्तम दशरथनन्दन श्री राम को भगवान श्री राम बनाया गोस्वामी तुलसीदास ने। 'साकेत' में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त श्री राम को मानव के रूप में देखते–देखते उनके उदात्त चरित्र के कारण अनायास यह भी कह उठते है– राम ! तुम मानव नहीं ईश्वर हो क्या ?

कहने का तात्पर्य सिर्फ़ इतना ही है कि "यूँ तो समन्दर में होते हैं क़तरे ही क़तरे सब, क़तरा वही है जिसमें समन्दर दिखाई दे।'

सो श्री गुप्ता जी की अपने इष्ट श्री राम को समर्पित यह कृति ऐसी है जिसमें हम श्री गुप्ता जी के माध्यम से तुलसी के भगवान श्री राम के उन सभी गुणों और आदर्शों पर दृष्टिपात करते हैं जिन्हें जीवन में उतारकर
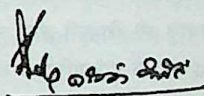
कोई भी श्रीराम के भक्ति सागर में स्नानकर अपने मन और समूचे जीवन को निर्मल बना सकता है।

ऐसे लोग जिनके पास व्यस्त जीवन–चर्या में श्रीरामचरित मानस का नियमित पाठ विस्तारपूर्वक करने का समय नहीं है अथवा जो चाहते हुए भी भगवान श्रीराम की कथा का श्रवण करने हेतु संतों के प्रवचन सुनने का समय नहीं निकाल पाते उनके लिए यह ग्रन्थ न केवल उपयोगी है अपितु वे इसका समय–समय पर पठन–मनन करके वही सुख प्राप्त करने में सफल होंगे जो श्री रामचरितमानस के नियमित पाठ से उन्हें मिलता।

स्तुति, भक्ति, सत्संग, नीति, गुण–धर्म–कर्त्तव्य–व्यवहार, जीवनोपयोगी बातें एवं उपसंहार इन सात खण्डों में अत्यन्त रोचक, सरल एवं आकर्षक शैली में गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित कल्याण कुंज के अंकों एवं अन्य विद्वानों द्वारा रचित पुस्तकों का सार लेकर, लेखक, श्रीराम के भक्तिसागर में उतरा है जो हमारे–आपके–सबके द्वारा पठनीय, श्रवणीय एवं अनुकरणीय है।

दि० २६.०६.२००६

शांतम् १०/३०/२, इन्दिरानगर,

लखनऊ–२२६ ०१६

(देवकीनन्दन 'शान्त')

भगवान श्रीराम का दासानुदास

विषय–सूची

—●—

नोटः– श्रीरामचरितमानस के सभी सन्दर्भों की पृष्ठ संख्या, गीता प्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित (सचित्र, सटीक–मोटा टाइप) संस्करण से है।

अध्याय – १

स्तुति

इस अध्याय में प्रभु श्री राम की, श्री राम चरित मानस के स्थान–स्थान पर विभिन्न प्रसंगों में उल्लिखित, स्तुतियों को अर्थ सहित उद्धृत किया गया है। इसके अतिरिक्त स्तुति संख्या **15** गोस्वामी तुलसीदास जी रचित ''विनय पत्रिका'' से उद्धृत की गई है। यह सभी स्तुतियॉ प्रभु श्री राम के चरण कमलों में प्रेम व भक्ति उत्पन्न करने वाली हैं। अतः प्रत्येक व्यक्ति को श्री राम के चरणों में निरन्तर भक्ति व प्रेम प्राप्त करने हेतु प्रतिदिन कम से कम इनमें से इच्छानुसार किसी एक स्तुति का गान करना चाहिये। स्तुति संख्या १५ विशेष तौर पर अविवाहित कन्याओं को सुयोग्य, सुशील एवं इच्छित वर प्राप्त करने हेतु उद्धृत की गई है।

— • —

(१)

श्री राम के जन्म (प्रगट होने) पर देवताओं एवं माता कौशल्या द्वारा प्रभु श्री राम की स्तुति

भए प्रगट कृपाला दीन दयाला कौशल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्‌भुत रूप विचारी।।
लोचन अभिरामा तनु घनस्यामा जिन आयुध भुज चारी।
भूषन वनमाला नयन विशाला शोभासिंधु खरारी।।१।।

कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि विधि करौं अनन्ता।
माया गुण ग्याना तीत अमाना वेद पुराण भनंता।।
करुणा सुख सागर सब गुण आगर जेहि गावहिं श्रुति संता।
सो मम हित लागी जन अनुरागी भयउ प्रगट श्रीकंता।।२।।

ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति वेद कहै।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै।।
उपजा जब ज्ञाना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत विधि कीन्ह चहै।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै।।३।।

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजै शिशु लीला अति प्रियसीला यह सुख परम अनूपा।।
सुनि वचन सुजाना रोदन ठाना होई बालक सुर भूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा।।४।।

दीनों पर दया करने वाले, कौशल्या जी के हितकारी कृपालु प्रभु प्रकट हुए। मुनियों के मन को हरने वाले उनके अदभुत रूप का विचार करके माता कौशल्या हर्ष से भर गई। नेत्रों को आनन्द देने वाला मेघ के समान श्याम शरीर था, चारों भुजाओं में अपने चार आयुध (शंख, चक्र, गदा एवं पद्‌म) धारण किये हुए थे, (दिव्य) आभूषण और वनमाला पहने

थे, विशाल (बड़े–बड़े) नेत्र थे। इस प्रकार शोभा के सागर तथा खर राक्षस को मारने वाले श्री भगवान प्रकट हुए।।१।।

दोनों हाथ जोड़कर माता कौशल्या कहने लगी– हे अनन्त! मैं किस प्रकार तुम्हारी स्तुति करूँ। वेद और पुराण तुमको माया, गुण और ज्ञान से परे और परिमाण रहित बतलाते हैं। श्रुतियाँ और संतजन दया और सुख का समुद्र, सब गुणों का धाम कहकर जिनका गान करते हैं, वहीं भक्तों पर प्रेम करने वाले लक्ष्मीपति भगवान मेरे कल्याण के लिये प्रगट हुए हैं।।२।।

वेद कहते हैं कि तुम्हारे प्रत्येक रोम में माया के रचे हुए अनेको ब्रह्मांड के समूह (भरे) हैं। वे तुम मेरे गर्भ में रहे– इस हँसी की बात के सुनने पर धीर (विवेकी) पुरुषों की बुद्धि भी स्थिर नहीं रहती (विचलित हो जाती है)। जब माता को ज्ञान उत्पन्न हुआ, तब प्रभु मुस्कराये। वे बहुत प्रकार के चरित्र करना चाहते हैं। अतः उन्होंने (पूर्व जन्म की) सुन्दर कथा कहकर माता को समझाया, जिससे उन्हें पुत्र का (वात्सल्य) प्रेम प्राप्त हो (भगवान के प्रति पुत्रभाव हो जाये)।।३।।

माता की वह बुद्धि बदल गयी, तब वह फिर बोली – हे तात ! यह रूप छोड़कर अत्यन्त प्रिय बाललीला करो, (मेरे लिये) यह सुख परम अनुपम होगा। (माता का) यह वचन सुनकर देवताओं के स्वामी सुजान भगवान ने बालक रूप होकर रोना शुरू कर दिया। जो इस चरित्र का गान करते हैं, वे श्री हरि का पद पाते हैं और (फिर) संसार रूपी कूप में नहीं गिरते ।।४।।

— ● —

(२)

(धनुष भंग के पश्चात्)

श्री परशुराम जी द्वारा श्री रामजी की स्तुति

जय रघुवंश बनज वन भानू। गहन दनुज कुल दहन कृसानू।।
जय सुर विप्र धेनु हितकारी। जय मद मोह कोह भ्रम भारी।।१।।

विनयशील करुणा गुण सागर। जयति वचन रचना अति नागर।।
सेवक सुखद सुभग सब अंगा। जय शरीर छवि कोटि अनंगा।।२।।

करौं काह मुख एक प्रशंसा। जय महेश मन मानस हंसा।।
अनुचित बहुत कहेऊँ अग्याता। छमहु क्षमा मंदिर दोऊ भ्राता।।३।।

कहि जय जय जय रघुकुल केतू। भृगुपति गए वनहि तप हेतू।।
अपभयॅ कुटिल महीप डेराने। जहं तहँ कायर गवॅहि पराने।।४।।

हे रघुकुल रूपी कमल वन के सूर्य। हे राक्षसों के कुलरूपी घने जंगल को जलाने वाले अग्नि। आपकी जय हो। हे देवता, ब्राह्मण और गौ का हित करने वाले। आपकी जय हो। हे मद, मोह, क्रोध, और भ्रम के हरने वाले। आपकी जय हो।।१।।

हे विनय, शील, करुणा, दया, कृपा आदि गुणों के समुद्र और वचनों की रचना में अति चतुर। आपकी जय हो। हे सेवकों को सुख देने वाले, सब अंगों से सुन्दर और शरीर में करोड़ों काम देवों की छवि धारण करने वाले। आपकी जय हो।।२।।

मैं एक मुख से आपकी क्या प्रशंसा करूँ? हे महादेव जी के मनरूपी मानसरोवर के हंस। आपकी जय हो। मैंने अनजाने में आपको बहुत से अनुचित वचन कहे। हे क्षमा के मन्दिर दोनों भाई। मुझे क्षमा कीजिये।।३।।

हे रघुकुल के पताका स्वरूप श्रीराम चन्द्रजी। आपकी जय हो, जय हो, जय हो। ऐसा कहकर परशुराम तप के लिये वन को चले गये। (यह देखकर) दुष्ट राजा लोग बिना ही कारण के (मनः कल्पित) डर से (राम चन्द्र जी से तो परशुराम जी भी हार गये, हमने इनका अपमान किया था, अब कहीं ये उसका बदला न लें, इस व्यर्थ के डर से) डर गये। वे कायर चुपके से यहां वहां भाग गये।।४।।

—●—

(३)

वनवास में श्री वाल्मीकि मुनि द्वारा स्तुति

श्रुति सेतु पालक राम तुम्ह जगदीश माया जानकी।
जो सृजति जग पालति हरति रुख पाइ कृपानिधान की।।
जो सहस सीसु अहीसु महिधरू लखन सचराचर धनी।
सुरकाज धरि नरराज तनु चले दलन खल निसिचर अनी।।१।।

राम सरूप तुम्हार वचन अगोचर बुद्धि पर।
अविगत अकथ अपार नेति नेति नित निगम कह।।२।।

जग पेखन तुम्ह देखन हारे। विधि हरि संभु नचावनि हारे।।
तेउ न जानहिं मरम तुम्हारा। औरु तुम्हहि को जाननिहारा।।३।।

सोइ जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई।।
तुम्हरिहिं कृपा तुम्हहि रघुनंदन। जानहि भगत भगत उर चंदन।।४।।

चिदानंदमय देह तुम्हारी। विगत विकार जान अधिकारी।।
नर तनु धरेहु संत सुर काजा। कहहु करहु जस प्राकृत राजा।।५।।

हे राम। आप वेद की मर्यादा के रक्षक जगदीश्वर हैं और जानकी जी (आपकी स्वरूप भूता) माया हैं, जो कृपा के भण्डार आपका रुख पाकर जगत का सृजन, पालन और संहार करती हैं। जो हजार मस्तकवाले सर्पों के स्वामी और पृथ्वी को अपने सिर पर रखने वाले हैं, वही चराचर के स्वामी शेषजी लक्ष्मण जी हैं। देवताओं के कार्य के लिये आप राजा का शरीर धारण करके दुष्ट राक्षसों की सेना का नाश करने के लिये चले हैं।।१।।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हे राम। आपका स्वरूप वाणी के अगोचर, बुद्धि से परे, अव्यक्त, अकथनीय और अपार है। वेद निरन्तर उसका "नेति–नेति" (इतना ही नहीं–ऐसा ही नहीं) कहकर वर्णन करते हैं।।२।।

हे राम। जगत दृश्य है, आप उसके देखने वाले हैं। आप ब्रह्मा, विष्णु और शंकर को भी नचाने वाले हैं। जब वे भी आपके मर्म को नहीं जानते, तब और कौन आपको जानने वाला है।।३।।

वही आपको जानता है जिसे आप जना देते हैं और जानते ही वह आपका ही स्वरूप बन जाता है। हे रघुनन्दन, हे भक्तों के हृदय के शीतल करने वाले चन्दन। आपकी ही कृपा से भक्त आपको जान पाते हैं।।४।।

आपकी देह चिदानन्दमय है (यह प्रकृति जन्य पंच महाभूतों की बनी हुई कर्मबन्धन युक्त, त्रृदेह–विशिष्ट मायिक नहीं है) और (उत्पत्ति, नाश, वृद्धि क्षय आदि) सब विकारों से रहित है; इस रहस्य को अधिकारी पुरुष ही जानते हैं। आपने देवता और संतों के कार्य के लिये (दिव्य) नर–शरीर धारण किया है और प्राकृत (प्रकृति के तत्वों से निर्मित देहवाले, साधारण) राजाओं की तरह से कहते और करते हैं।।५।।

(४)

अत्रि मुनि द्वारा प्रभु श्री राम की स्तुति

- नमामि भक्त वत्सलं। कृपालुशील कोमलं। भजामि ते पदांवुजं। अकामिनां स्वधामदं।।१।।
- निकाम श्याम सुंदर। भवांवुनाथ मंदरं। प्रफुल्ल कंज लोचनं। मदादि दोष मोचन।।२।।
- प्रलंव बाहु विक्रमं। प्रभो अप्रमेय वैभवं। निषंग चाप सायकं। धरं त्रिलोक नायकं।।३।।
- दिनेश वंश मंडनं। महेश चाप खंडनं। मुनीद्रं सतं रंजनं। सुरारि वृंद भंजनं।।४।।
- मनोज वैरि वंदितं। अजादि देव सेवितं। विशुद्ध वोध विग्रहं। समस्त दूषणापहं।।५।।
- नमामि इंदिरा पतिं। सुखाकरं सतां गतिं। भजे सशक्ति सानुजं। शचीपति प्रियानुजं।।६।।
- त्वंदध्रि मूल ये नराः। भंजति डीन मत्सराः। पतंति नो भवार्णवे। वितर्क वीचि संकुले।।७।।
- विविक्त वासिनः सदा। भजंत मुक्तये मुदा। निरस्य इंद्रियादिकं। प्रयांति ते गतिं स्वकं।।८।।
- तमेकमद्भुतं प्रभुं। निरीहमीश्वरं विभुं। जगदगुरुं च शाश्वतं। तुरीयमेव केवलं।।९।।
- भजामि भाव बल्लभं। कुयोगिनां सुदर्लभं। स्वभक्त कल्प पादपं। समं सुसेव्यमन्वहं।।१०।
- अनूप रूप भूपतिं। नतोऽहमुर्विजा पतिं। प्रसीद मे नमामि ते। पदाव्ज भक्ति देह में।।११।।
- पठंति ये स्तवं इदं। नरादरेण ते पदं। ब्रजंति नात्र संशयं। त्वदीय भक्ति संयुताः।।१२।।

हे भक्त वत्सल। हे कोमल स्वभाव वाले। मैं आपको नमस्कार करता हूँ। निष्काम पुरुषों को अपना परमधाम देने वाले आपके चरण कमलों को मैं भजता हूँ।।१।।

आप नितान्त सुन्दर श्याम, संसार (आवागमन) रूपी समुद्र को मथने के लिये मन्दराचलरूप, फूले हुए कमल के समान नेत्रों वाले और मद आदि दोषों से छुड़ाने वाले हैं।।२।।

हे प्रभु आपकी लम्बी भुजाओं का पराक्रम और आपका ऐश्वर्य अप्रमेय (बुद्धि के परे अथवा असीम) है। आप तरकस और धनुष–बाण धारण करने वाले तीनों लोकों के स्वामी,।।३।।

सूर्य वंश के भूषण, महादेवजी के धनुष को तोड़ने वाले, मुनिराजों और संतों को आनन्द देने वाले तथा देवताओं के शत्रु असुरों के समूह का नाश करने वाले हैं।।४।।

आप कामदेव के शत्रु महादेवजी के द्वारा वन्दित, ब्रह्मा आदि देवताओं से सेवित, विशुद्ध ज्ञानमय विग्रह और समस्त दोषों के नष्ट करने वाले हैं।।५।।

हे लक्ष्मीपति ! हे सुखों की खान और सत्पुरुषों की एकमात्र गति मैं आपको नमस्कार करता हूँ। हे शचीपति (इन्द्र) के प्रिय छोटे भाई (वामन जी)। स्वरूपा शक्ति श्री सीताजी और छोटे भाई श्री लक्ष्मण जी सहित आपको मैं भजता हूँ।।६।।

जो मनुष्य मत्सर (डाह) रहित होकर आपके चरण कमलों का सेवन करते हैं वे तर्क–वितर्क (अनेक प्रकार के संदेह) रूपी तरंगों से पूर्ण संसार रूपी समुद्र में नहीं गिरते (आवागमन के चक्कर में नहीं पड़ते)।।७।।

जो एकान्तवासी पुरुष मुक्ति के लिये, इन्द्रियादि का निग्रह करके (उन्हें विषयों से हटाकर) प्रसन्नतापूर्वक आपको भजते हैं, वे स्वकीय गति को (अपने स्वरूप को) प्राप्त होते हैं।।८।।

उन (आप) को जो एक (अद्वितीय), अद्भुत (मायिक जगत से विलक्षण), प्रभु (सर्वसमर्थ), इच्छारहित, ईश्वर (सबके स्वामी), व्यापक, जगदगुरु, सनातन (नित्य), तुरीय (तीनों गुणों से सर्वथा परे) और केवल (अपने स्वरूप में स्थित) हैं।।६।।

(तथा) जो भावप्रिय, कुयोगियों (विषयी पुरुषों) के लिये दुर्लभ, अपने भक्तों के लिये कल्पवृक्ष (अर्थात् उनकी समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाले), सम (पक्षपात रहित) और सदा सुखपूर्वक सेवन करने योग्य हैं; मैं निरन्तर भजता हूँ।।१०।।

हे अनुपम सुन्दर। हे पृथ्वीपति। हे जानकी नाथ। मैं आपको प्रणाम करता हूँ। मुझ पर प्रसन्न होइये; मैं आपको नमस्कार करता हूँ। मुझे अपने चरण कमलों की भक्ति दीजिये।।११।।

जो मनुष्य इस स्तुति को आदरपूर्वकर पढ़ते हैं, वे आपकी भक्ति से युक्त होकर आपके परम पद को प्राप्त होते हैं, इसमें संदेह नहीं है।।१२।।

— • —

(५)

श्री अगस्तय मुनि के ज्ञानी शिष्य सुतीक्षण जी द्वारा स्तुति

श्याम तामरस दाम शरीरं। जटा मुकुट परिधन मुनिचीरं।।
पाणि चाप शर कटि तुणीरं। नौमि निरंतर श्री रघुवीरं।।१।।

मोह विपिन घन दहन कृशानुः। संत सरोरूह कानन भनुः।।
निसिचर करि वरूथ मृगराजः। त्रातु सदा नो भव खग वाजः।।२।।

अरुण नयन राजीव सुवेशं। सीता नयन चकोर निशेशं।।
हर हृदि मानस वाल मरालं। नौमि राम उर वाहु विशालं।।३।।

संशंय सर्प ग्रसन उरगादः। शमन सुकर्कश तर्क विषादः।।
भव भंजन रंजन सुर यूथः। त्रातु सदा नो कृपा वरुथः।।४।।

निर्गुण सगुण विषम सम रूपं। ज्ञान गिरा गोतीतमनूपं।।
अमलमखिलमनवद्यमपारं। नौमि राम भंजन महि भारं।।५।।

भक्त कल्पपादप आरामः। तर्जन क्रोध लोभ मद कामः।।
अति नागर भव सागर सेतुः। त्रातु सदा दिनकर कुल केतुः।।६।।

अतुलित भुज प्रताप वल धामः। कलि मल विपुल विभंजन नामः।।
धर्म वर्म नर्मद गुण ग्रामः। संतत शं तनोतु मम रामः।।७।।

जदपि विरज व्यापक अबिनासी। सब के हृदय निरंतर वासी।।
तदपि अनुज श्री सहित खरारी। बसतु मनसि मम कानन चारी।।८।।

जे जानहिं ते जानहुँ स्वामी। सगुन अगुन उर अंतरजामी।।
जो कोसलपति राजिव नयना। करउ सो राम हृदय मम अयना।।९।।

अस अभिमान जाइ जनभोरे। मैं सेवक रघुपति पति मोरे।।१०।।

अनुज जानकी सहित प्रभु चाप बान धर राम।
मम हिय गगन इंदु इव वसहु सदा निहकाम।।११।।

हे नील कमल की माला के समान श्याम शरीर वाले ! हे जटाओं का मुकुट और मुनियों के (वल्कल) वस्त्र पहने हुए, हाथों में धनुष–वाण लिये तथा कमर में तरकस कसे हुए श्री रामजी। मैं आपको निरन्तर नमस्कार करता हूँ।।१।।

जो मोह रूपी घने वन को जलाने के लिए अग्नि है, संत रूपी कमलों के वन के प्रफुल्लित करने के लिये सूर्य है, राक्षस रूपी हाथियों के समूह के पछाड़ने के लिये सिंह है और भव (आवागमन) रूपी पक्षी के मारने के लिये बाज रूप है, वे प्रभु सदा हमारी रक्षा करें।।२।।

हे लाल कमल के समान नेत्र और सुन्दर वेष वाले ! सीताजी के नेत्र रूपी चकोर के चन्द्रमा, श्री शिवजी के हृदय रूपी मानसरोवर के बालहंस, विशाल हृदय और भुजा वाले श्रीराम चन्द्र जी ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ।।३।।

जो संशय रूपी सर्प को ग्रसने के लिये गरुड़ हैं, अत्यन्त कठोर तर्क से उत्पन्न होने वाले विषाद का नाश करने वाले हैं, आवागमन के मिटाने वाले और देवताओं के समूह को आनन्द देने वाले हैं, वे कृपा के समूह श्रीराम जी सदा हमारी रक्षा करें।।४।।

हे निर्गुण, सगुण, विषम और समरूप, हे ज्ञान, वाणी और इन्द्रियों से अतीत ! हे अनुपम, निर्मल, सम्पूर्ण दोष रहित, अनन्त एवं पृथ्वी का भार उतारने वाले श्री राम चन्द्र जी। मैं आपको नमस्कार करता हूँ।।५।।

जो भक्तों के लिये कल्पवृक्ष के बगीचे हैं, क्रोध लोभ, मद और काम को डराने वाले हैं, अत्यन्त ही चतुर और संसार रूपी समुद्र से तारने के लिये सेतु रूप हैं, वे सूर्य कुल की ध्वजा स्वरूप श्री रामजी सदा मेरी रक्षा करें।।६।।

जिनकी भुजाओं का बल अतुलनीय है, जो बल का धाम है, जिनका नाम कलियुग के समस्त बड़े भारी पापों का नाश करने वाला है, जो धर्म के कवच (रक्षक) हैं और जिनके गुण समूह आनन्द देने वाले हैं, वे श्री राम चन्द्र जी निरन्तर मेरे कल्याण का विस्तार करें।।७।।

। यद्यपि आप निर्मल, व्यापक, अविनाशी और सबके हृदय में निरन्तर निवास करने वाले हैं, तथापि हे खरारि श्री रामजी ! लक्ष्मणजी और सीताजी सहित वन में विचरने वाले इसी रूप में मेरे हृदय में निवास कीजिये।।८।।

हे स्वामी ! आपको जो सगुण, निर्गुण और अन्तर्यामी जानते हों, वे जाना करें, मेरे हृदय को तो कोसलपति कमलनयन श्री रामचन्द्र जी ही अपना घर बनायें।।६।।

ऐसा अभिमान भूलकर भी न छूटे कि मैं सेवक हूँ और श्री रघुनाथ जी मेरे स्वामी हैं।।१०।।

हे प्रभो ! हे श्रीराम जी ! छोटे भाई लक्ष्मण जी और सीताजी सहित धनुषबाणधारी आप निष्काम (स्थिर) होकर मेरे हृदय रूपी आकाश में चन्द्रमा की भांति सदा निवास कीजिए।।११।।

— ● —

(६)

जटायु द्वारा श्री रामजी की स्तुति

जय राम रूप अनूप निर्गुन सगुन गुन प्रेरक सही।
दससीस बाहु प्रचंड खंडन चंड सर मंडन मही।।
पाथोद गात सरोज मुख राजीव आयत लोचनं।
नित नौमि रामु कृपालु बाहु विसाल भव भय मोचनं।।१।।

बलमप्रमेयमनादिमजमव्यक्तमेकमगोचरं।
गोविंद गोपर द्वंदहर बिग्यान घन धरनीधरं।।
जेराम मंत्र जपंत संत अनंत जन मन रंजनं।
नित नौमि राम अकाम प्रिय कामादि खल दल गंजनं।।२।।

जेहि श्रुति निरंजन ब्रह्म व्यापक बिरज अज कहि गावही।
करि ध्यान ग्यान बिराग जोग अनेक मुनि जेहि पावही।।
सो प्रगट करुना कंद सोभा वृंद अग जग मोहई।
मम हृदय पंकज भृंग अंग अनंग बहु छवि सोहई।।३।।

जो अगम सुगम सुभाव निर्मल असम सम सीतल सदा।
पस्यंति जं जोगी जतन करि करत मन गो बस सदा।।
सो राम रमा निवास संतत दास वस त्रिभुवन धनी।
मम उर बसउ सो समन संसृति जासु कीरति पावनी।।४।।

हे राम जी ! आपका रूप अनुपम है, आप निर्गुण हैं, सगुण हैं और सत्य ही गुणों के (माया के) प्रेरक हैं। दस सिरवाले रावण की प्रचण्ड भुजाओं को खण्ड–खण्ड करने के प्रचण्ड वाण धारण करने वाले, पृथ्वी को सुशोभित करने वाले, जलयुक्त मेघ के समान श्याम शरीर वाले, कमल के समान मुख वाले और (लाल) कमल के समान नेत्रों वाले

विशाल भुजाओं वाले और भव–भय से छुड़ाने वाले कृपालु श्री रामचन्द्र जी को मैं नित्य नमस्कार करता हूँ।।1।।

आप अपरिमित बल वाले हैं, अनादि, अजन्मा, अव्यक्त (निराकार) एक अगोचर (अलक्ष्य), गोविन्द (वेद वाक्यों द्वारा जानने योग्य), इन्द्रियों से अतीत, (जन्म–मरण, सुख–दुःख, हर्ष–शोकादि) द्वन्द्वों को हरने वाले, विज्ञान की घनमूर्ति और पृथ्वी के आधार हैं तथा जो संत राम मंत्र को जपते हैं, उन अनन्त सेवकों के मन को आनन्द देने वाले हैं। उन निष्कामप्रिय (निष्कामजनों के प्रेमी अथवा उन्हें प्रिय) तथा काम आदि दुष्टों (दुष्ट वृत्तियों) के दल का दलन करने वाले श्री रामजी को मैं नित्य नमस्कार करता हूँ।।2।।

जिनको श्रुतियाँ निरंजन (माया से परे), ब्रह्म, व्यापक, निर्विकार और जन्मरहित कहकर गान करती हैं। मुनि जिन्हें ध्यान, ज्ञान, वैराग्य और योग आदि अनेक साधन करके पाते हैं। वे ही करुणाकन्द, शोभा के समूह (स्वयं श्री भगवान) प्रगट होकर जड़, चेतन समस्त जगत को मोहित कर रहे हैं। मेरे हृदय कमल के भ्रमर रूप उनके अंग–अंग में बहुत से कामदेवों की छवि शोभा पा रही है।।3।।

जो अगम और सुगम है, निर्मल स्वभाव है, विषम और सम है और सदा शीतल (शान्त) हैं। मन और इन्द्रियों को सदा वश में करते हुए योगी बहुत साधन करने पर जिन्हें देख पाते हैं, वे तीनों लोकों के स्वामी, रमानिवास श्री रामजी निरन्तर अपने दासों के वश में रहते हैं, वे हीं मेरे हृदय में निवास करें, जिनकी पवित्र कीर्ति आवागमन को मिटाने वाली है।।4।।

—●—

(७)

ब्रह्माजी द्वारा भगवान श्री रामजी की स्तुति

जय राम सदा सुखधाम हरे। रघुनायक सायक चाप धरे।।
भव वारन दारन सिंह प्रभो। गुन सागर नागर नाथ विभो।।१।।

तन काम अनेक अनूप छबी। गुन गावत सिद्ध मुनींद्र कबी।।
जसु पावन रावन नाग महा। खगनाथ जथा करि कोप गहा।।२।।

जन रंजन भंजन सोक भयं। गतक्रोध सदा प्रभु बोधमयं।।
अवतार उदार अपार गुनं। महि भार विभंजन ग्यानघनं।।३।।

अज व्यापकमेकमनादि सदा। करुनाकर राम नमामि मुदा।।
रघुबंस विभूषन दूषन हा। कृत भूप बिभीषन दीन रहा।।४।।

गुन ग्यान निधान अमान अजं। नित राम नमामि विभुं विरजं।।
भुजदंड प्रचंड प्रताप वलं। खल बृंद निकंद महा कुसलं।।५।।

विनु कारन दीन दयाल हितं। छवि धाम नमामि रमा सहितं।।
भव तारन कारन काज परं। मन संभव दारुन दोष हरं।।६।।

सर चाप मनोहर त्रोन धरं। जलजारुन लोचन भूपवरं।।
सुख मंदिर सुंदर श्रीरमनं। मद मार मुधा ममता समनं।।७।।

अनवद्य अखंड न गोचन गो। सबरूप सदा सब होई न गो।।
इति बेद वदंति न दंतकथा। रबि आतप भिन्नमभिन्न जथा।।८।।

कृतकृत्य बिभो सब बानर ए। निरखंति तवानन सादर ए।।
धिग जीवन देव शरीर हरे। तब भक्ति बिना भव भूलि परे।।९।।

अब दीनदयाल दया करिऐ। मति मोरि बिभेदकरी हरिऐ।।
जेहि ते बिपरीत किया करिऐ। दुख सो सुख मानि सुखी चरिऐ।।१०।।

खल खंडन मंडन रम्य क्षमा। पद पंकज सेवित संभु उमा।।
नृप नायक दे बरदानमिंदं। चरनाबुंज प्रेम सदा सुभदं।।११।।

हे नित्य सुखधाम और (दुःखों को हरने वाले) हरि ! हे धनुष–वाण धारण किये हुए रघुनाथजी ! आपकी जय हो ! हे प्रभो ! आप भव (जन्म–मरण) रूपी हाथी को विर्दीण करने के लिये सिंह के समान हैं। हे नाथ ! हे सर्वव्यापक ! आप गुणों के समुद्र और परम चतुर हैं।।१।।

आपके शरीर की अनकों कामदेवों के समान, परन्तु अनुपम छवि है। सिद्ध, मुनीश्वर और कवि आपके गुण गाते रहते हैं। आपका यश पवित्र है। आपने रावणरूपी महासर्प को गरुड़ की तरह क्रोध करके पकड़ लिया।।२।।

हे प्रभो ! आप सेवकों को आनन्द देने वाले शोक और भय का नाश करने वाले, सदा क्रोध रहित और नित्य ज्ञान स्वरूप हैं। आपका अवतार श्रेष्ठ, अपार दिव्य गुणों वाला, पृथ्वी का भार उतारने वाला और ज्ञान का समूह है।।३।।

(किन्तु अवतार लेने पर भी) आप नित्य, अजन्मा, व्यापक, एक (अद्वितीय) और अनादि हैं। हे करुणा की खान श्रीरामजी ! मैं आपको बड़े हर्ष के साथ नमस्कार करता हूँ। हे रघुकुल के आभूषण। हे दूषण राक्षस को मारने वाले तथा समस्त दोषों को हरने वाले। विभीषण दीन था, उसे (लंका का) राजा बना दिया ।।४।।

हे गुण और ग्यान के भण्डार ! हे मानरहित ! हे अजन्मा, व्यापक और मायिक विकारों से रहित श्रीराम। मैं आपको नित्य नमस्कार करता हूँ। आपके भुजदण्डों का प्रताप और बल प्रचण्ड हैं दुष्ट समूह के नाश करने में आप परम निपुण हैं।।५।।

हे बिना ही कारण दीनों पर दया तथा उनका हित करने वाले और शोभा के धाम। मैं श्री जानकी जी सहित आपको सदा नमस्कार करता हूँ। आप भवसागर से तारने वाले हैं, कारणरूपा प्रकृति और कार्यरूप

अजगत दानों से परे हैं और मन से उत्पन्न होने वाले कठिन दोषों को हरने वाले हैं।।६।।

आप मनोहर वाण, धनुष और तरकस धारण करने वाले हैं। (लाल) कमल के समान रक्तवर्ण आपके नेत्र हैं आप राजाओं में श्रेष्ठ, सुख के मन्दिर, सुन्दर श्री (लक्ष्मीजी) के वल्लभ तथा मद (अहंकार) काम और झूठी ममता के नाश करने वाले हैं।।७।।

आप अनिन्द्य या दोष रहित हैं, अखण्ड हैं, इन्द्रियों के विषय नहीं हैं सदा सर्वरूप होते हुए भी आप वह सब कभी हुए ही नहीं, ऐसा वेद कहते हैं। यह (कोई) दन्तकथा (कोरी कल्पना) नहीं है। जैसे सूर्य और सूर्य का प्रकाश अलग–अलग नहीं भी हैं, वैसे ही आप भी संसार से भिन्न तथा अभिन्न दोनों ही हैं।।८।।

हे व्यापक प्रभो ! ये सब वानर कृतार्थ रूप हैं। जो आदरपूर्वक ये आपका मुख देख रहे हैं। (और) हे हरे ! हमारे (अमर) जीवन और देव (दिव्य) शरीर को धिक्कार है, जो हम आपकी भक्ति से रहित हुए संसार (सांसारिक विषयों में भूले पड़े हैं !)।।६।।

हे दीनदयालु ! अब दया कीजिये और मेरी उस विभेद उत्पन्न करने वाली बुद्धि को हर लीजिये, जिससे मैं विपरीत कर्म करता हूँ और जो दुःख हैं, उसे सुख मानकर आनन्द से विचरता हूँ।।१०।।

आप दुष्टों का खण्डन करने वाले और पृथ्वी के रमणीय आभूषण हैं। आपके चरण–कमल श्री शिव–पार्वती द्वारा सेवित हैं। हे राजाओं के महाराज ! मुझे यह वरदान दीजिये कि आपके चरण कमलों में सदा मेरा कल्याणदायक (अनन्य) प्रेम हो।।११।।

— ● —

इन्द्र द्वारा श्रीरामचन्द्र जी भगवान की स्तुति

जय राम सोभा धाम। दायक प्रनत विश्राम।।
धृत त्रोन वर सर चाप। भुजदंड प्रबल प्रताप।।१।।

जय दूषनारि खरारि। मर्दन निसाचर धारि।
यह दुष्ट मारेउ नाथ। भए देव सकल सनाथ।।२।।

जय हरन धरनी भार। महिमा उदार अपार।।
जय रावनारि कृपाल। किए जातु धान बिहाल।।३।।

लंकेस अति बल गर्व। किये वस्य सुर गंधर्व।।
मुनि सिद्ध नर खग नाग। हठि पंथ सब के लाग।।४।।

परद्रोह रत अति दुष्ट। पायो सो फलु पापिष्ट।।
अब सुनहु दीन दयाल। राजीव नयन विसाल।।५।।

मोहि रहा अति अभिमान नहिं कोउ मोहि समान।।
अब देखि प्रभु पद कंज। गत मान प्रद दुख पुंज।।६।।

कोउ ब्रह्म निर्गुन ध्याव। अव्यक्त जेहि श्रुति गाव।।
मोहि भाव कोसल भूप। श्रीराम सगुन सरूप।।७।।

वैदेहि अनुज समेत। मम ह्रदय करहु निकेत।।
मोहि जानिऐ निज दस। दे भक्ति रमानिवास।।८।।

शोभा के धाम, शरणागत को विश्राम देनेवाले, श्रेष्ठ तरकस, धनुष और वाण धारण किये हुए प्रबल, प्रतापी भुजदण्डों वाले श्रीरामचन्द्र जी महाराज की जय हो।।१।।

हे रावण और दूषण के शत्रु और राक्षसों की सेना के मर्दन करने वाले ! आपकी जय हो। हे नाथ ! आपने इस दुष्ट (रावण) को मारा, जिससे देवता सनाथ (सुरक्षित) हो गये।।२।।

हे भूमि का भार हरने वाले ! हे अपार श्रेष्ठ महिमा वाले ! आपकी जय हो ! हे रावण के शत्रु ! हे कृपालु ! आपकी जय हो। आपने राक्षसों को बेहाल (तहस–नहस) कर दिया।।३।।

लंकापति रावण को अपने बल का बहुत गर्व (घमंड) था। उसने देवता और गन्धर्व सभी को अपने वश में कर लिया था और वह मनुष्य पक्षी और नाग आदि सभी के हठपूर्वक (हाथ धोकर) पीछे पड़ गया था।।४।।

वह दूसरों से द्रोह करने में तत्पर और अत्यन्त दुष्ट था। उस पापी (रावण) ने वैसा ही फल पाया। अब हे दीनों पर दया करने वाले। हे कमल के समान विशल नेत्रों वाले ! सुनिये।।५।।

मुझे अत्यन्त अभिमान था कि मेरे समान कोई नहीं है, पर अब प्रभु के चरणकमलों के दर्शन करने से दुःख–समूह का देनेवाला मेरा वह अभिमान जाता रहा।।६।।

कोई उन निर्गुण ब्रह्म का ध्यान करते हैं जिन्हें वेद अव्यक्त (निराकार) कहते हैं। परन्तु हे श्रीरामजी ! मुझे तो आपका यह सगुण कोसलराज–स्वरूप ही प्रिय लगता है।।७।।

श्री जानकी जी और छोटे भाई श्री लक्ष्मण जी सहित मेरे हृदय में अपना घर बनाइये। हे रमानिवास ! मुझे अपना दास समझिये और अपनी अचल एवं अनन्य भक्ति दीजिये।।८।।

— ● —

छन्द

दे भक्ति रमानिवास त्रास हरन सरन सुखदायकं।
सुख धाम राम नमामि काम अनेक छवि रघुनायकं।।
सुर वृंद रंजन द्वंद भंजन मनुन तनु अतुलित वलं।
ब्रह्मादि संकर सेव्य राम नमामि करुना कोमलं।।

हे रमानिवास। हे शरणागत के भय को हरने वाले और उसे सब प्रकार का सुख देने वाले। मुझे अपनी भक्ति दीजिये। हे सुख के धाम हे अनेकों कामदेवों की छवि वाले रघुकुल के स्वामी श्रीरामचन्द्र जी ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। हे देव समूह को आनन्द देने वाले (जन्म–मृत्यु) हर्ष–विषाद सुख–दुःख आदि द्वन्द्वों के नाश करने वाले, मनुष्य शरीरधारी अतुलनीय बलवाले, ब्रह्मा और शिव आदि से सेवनीय, करुणा से कोमल श्रीरामजी ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

—●—

श्री शंकर भगवान द्वारा प्रभु श्रीराम चन्द्रजी की स्तुति

ममभिरक्षय रघुकुल नायक। धृत बर चाप रुचिर कर सायक।।
मोह महा घन पटल प्रभंजन। संसय बिपिन अनल सुर रंजन।।१।।

अगुन सगुन गुन मंदिर सुंदर। भ्रम तम प्रबल प्रताप दिवाकर।।
काम क्रोध मद गज पंचानन। बसहु निरंतर जन मन कानन।।२।।

विषय मनोरथ पुंज कंज बन। प्रबल तुषार उदार पार मन।।
भव बारिधि मंदर परमं दर। बारय तारय संसृति दुस्तर।।३।।

स्याम गात राजीव बिलोचन। दीन बन्धु प्रनतारति मोचन।।
अनुज जानकी सहित निरन्तर। बसहु राम नृप मम उर अंतर।।
मुनि रंजन महि मंडल मंडन। तुलसीदास प्रभु त्रास विखंडन।।४।।

हे रघुकुल के स्वामी ! सुन्दर हाथों में श्रेष्ठ धनुष और सुन्दर बाण धारण किये हुए आप मेरी रक्षा कीजिये। आप महामोह रूपी मेघसमूह के (उड़ाने के) लिए प्रचण्ड वन हैं। संशय रूपी वन के (भस्म करने के) लिए अग्नि हैं और देवताओं को आनन्द देने वाले हैं।।१।।

आप निर्गुण, सगुण, दिव्य गुणों के धाम और परम सुन्दर हैं। भ्रम रूपी अन्धकार के (नाश के) लिए प्रबल प्रतापी सूर्य हैं। काम, क्रोध और मद रूपी हाथियों के (वध के) लिए सिंह के समान आप इस सेवक के मन रूपी वन में निरन्तर निवास कीजिये।।२।।

विषय कामनाओं के समूह रूपी कमलवन के (नाश के) लिये आप प्रबल पाला हैं, आप उदार और मन से परे हैं। भवसागर (को मथने) के लिए आप मन्दराचल पर्वत हैं। आप हमारे परम भय को दूर कीजिये और हमें दुस्तर संसार सागर से पार कीजिये।।३।।

हे श्यामसुन्दर–शरीर ! हे कमल नयन ! हे दीनबन्धु ! हे शरणागत को दुःख से छुड़ाने वाले ! हे राजा रामचन्द्र जी ! आप छोटे भाई लक्ष्मण और जानकीजी सहित निरन्तर मेरे हृदय के अंदर निवास कीजिए। आप मुनियों को आनन्द देने वाले, पृथ्वी मण्डल के भूषण तुलसीदास के प्रभु (मेरे सब कुछ) और भय का नाश करने वाले हैं।।४।।

वेदों द्वारा श्रीराम चन्द्रजी महाराज की स्तुति

जय सगुन निर्गुन रूप रूप अनूप भूप सिरोमने।
दसकंधरादि प्रचंड निसिचर प्रबल खल भुजबल हने।।
अवतार नर संसार भार बिभंजि दारुन दुख दहे।
जय प्रनतपाल दयाल प्रभु संजुक्त सक्ति नमामहे।।१।।

तव बिषम माया बस सुरासुर नाग नर अग जग हरे।
भव पंथ भ्रमत अमित दिवस निसि काल कर्म गुननि भरे।।
जे नाथ करि करुना बिलोके त्रिबिधि दुःख ते निर्बहे।
भव खेद छेदन दच्छ हम कहुँ रच्छ राम नमामहे।।२।।

जे ग्यान मान बिमत्त तव भव हरनि भक्ति न आदरी।
ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी।।
बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे।
जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भव नाथ सो समरामहे।।३।।

जे चरन सिव अज पूज्य रज सुभ परसि मुनिपतिनी तरी।
नख निर्गता मुनि बंदिता त्रैलोक पावन सुरसरी।।
ध्वज कुलिस अंकुस कंज जुत बन फिरत कंटक किन लहे।
पद कंज द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामहे।।४।।

अव्यक्तमूलमनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने।
षट कंध साखा पंच बीस अनेक पर्न सुमन घने।।
फल जुगल विधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहिं आश्रित रहे।
पल्लवत फूलत नवल नित संसार विटप नमामहे।।५।।

जे ब्रह्म अजमद्वैत मनुभवगम्य मन पर ध्यावहीं।
ते कहहुँ जानहुँ नाथ हम तव सगुन जस नित गावहीं।।
करुनायतन प्रभु सदगुनाकर देव यह वर मागहीं।
मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं।।६।।

हे सगुण और निगुण रूप ! हे अनुपम रूप–लावण्युक्त ! हे राजाओ के शिरोमणि ! आपकी जय हो। आपने रावण आदि प्रचण्ड, प्रबल और दुष्ट निशाचरों को अपनी भुजाओं के बल से मार डाला। आपने मनुष्य–अवतार लेकर संसार के भार को नष्ट करके अत्यन्त कठोर दुखों को भस्म कर डाला। हे दयालु। हे शरणागत की रक्षा करने वाले प्रभो। आपकी जय हो। मैं शक्ति (श्रीसीताजी) सहित शक्तिमान आपको नमस्कार करता हूँ।।१।।

हे हरे ! आपकी दुस्तर माया के वशीभूत होने के कारण देवता, राक्षस, नाग, मनुष्य और चर, अचर सभी काल, कर्म और गुणों से भरे हुए (उनके वशीभूत हुए) दिन–रात अनन्त भव (आवागमन) के मार्ग में भटक रहे हैं। हे नाथ इनमें से जिनको आपने कृपा करके (कृपाद्रष्टि से) देख लिया, वे (माया–जनित) तीनों प्रकार के दुःखों से छूट गये। हे जन्म–मरण के भ्रम को काटने में कुशल श्रीराम जी ! हमारी रक्षा कीजिये। हम आपको नमस्कार करते हैं।।२।।

जिन्होंने मिथ्या ज्ञान के अभिमान में विशेष रूप से मतवाले होकर जन्म–मृत्यु (के भय) को हरने वाली आपकी भक्ति का आदर नहीं किया, हे हरि ! उन्हें देव दुर्लभ (देवताओं को भी बड़ी कठिनता से प्राप्त होने वाले, ब्रह्मा आदि के) पद को पाकर भी हम उस पद से नीचे गिरते देखते हैं। (परन्तु) जो सब आशाओं को छोड़कर आप पर विश्वास करके आपके दास हो रहते हैं, वे केवल नाम ही जपकर बिना ही परिश्रम भव सागर से तर जाते हैं। हे नाथ ! ऐसे आपका हम स्मरण करते हैं।।३।।

जो चरण शिवजी और ब्रह्माजी के द्वारा पूज्य है तथा जिन चरणों की कल्याणमयी रज का स्पर्श पाकर (शिला बनी हई) गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या तर गयी; जिन चरणों के नख से मुनियों द्वारा वन्दित, त्रैलोक्य को पवित्र करने वाली देव नदी गंगाजी निकलीं और ध्वजा, वज्र, अंकुश और कमल, इन चिन्हों से युक्त जिन चरणों में वन में फिरते समय

कांटे चुभ जाने से घट्ठे पड़ गये हैं, हे मुकुन्द ! हे राम ! हे रमापति ! ह
आपके उन्हीं चरण कमलों को नित्य भजते रहते हैं।।४।।

वेद–शास्त्रों ने कहा है कि जिसका मूल अव्यक्त (प्रकृति) हैं, ज
(प्रवाह रूप से) अनादि हैं, जिसके चार त्वचाएँ, छः तने, पच्चीस शाखा
और अनेकों पत्ते और बहुत से फूल हैं, जिसमें कड़वे और मीठे दो प्रक
के फल लगे हैं, जिस पर एक ही बेल है, जो उसी के आश्रित रहती
जिसमें नित्य नये पत्ते और फूल निकलते रहते हैं, ऐसे संसार वृक्ष स्वरू
(विश्वरूप में प्रकट) आपको हम नमस्कार करते हैं।।५।।

ब्रह्म अजन्मा है, अद्वैत है, केवल अनुभव से ही जाना जाता है अ
मन से परे है– जो (इस प्रकार कहकर उस) ब्रह्म का ध्यान करते हैं,
ऐसा कहा करें और जाना करें, किन्तु हे नाथ ! हम तो नित्य आपव
सगुण यश ही गाते हैं। हे करुणा के धाम प्रभो ! हे सदगुणों की खान
हे देव ! हम यह वर माँगते हैं कि मन, वचन और कर्म से विकारों
त्यागकर आपके चरणों में ही प्रेम करें।।६।।

— ● —

(११)

भगवान श्री शिवजी द्वारा श्रीराम चन्द्रजी महाराज की स्तुति

जय राम रमारमनं समनं। भवताप भयाकुल पाहि जनं।।
अवधेस सुरेस रमेस विभो। सरनागत मागत पाहि प्रभो।।१।।

दससीस बिनासन बीस भुजा। कृत दूरि महा महि भूरि रूजा।।
रजनीचर बृंद पतंग रहे। सर पावक तेज प्रंचड दहे।।२।।

महि मंडल मंडन चारुतरं। धृत सायक चाप निषग बरं।।
मद मोह महा ममता रजनी। तम पुंज दिवाकर तेजअनी।।३।।

मनजात किरात निपात किए। मृग लोग कुभोग सरेन हिए।।
हति नाथ अनाथनि पाहि हरे। विषया बन पावँर भूलि परे।।४।।

बहु रोग बियोगन्हि लोग हए। भवदंघ्रि निरादर के फल ए।।
भव सिंधु अगाध परे नर ते। पद पंकज प्रेम न जे करते।।५।।

अति दीन मलीन दुखी नितहीं। जिन्ह के पद पकंज प्रीति नहीं।।
अवलंव भवंत कथा जिन्ह कें। प्रिय संत अनंत सदा तिन्ह कें।।६।।

नहिं राग न लोभ न मान मदा। तिन्ह के सम बैभव वा बिपदा।।
एहि ते तव सेवक होत मुदा। मुनि त्यागत जोग भरोस सदा।।७।।

करि प्रेम निरन्तर नेम लिएँ। पद पंकज सेवत सुद्ध हिएँ।।
सम मानि निरादर आदरहीं। सब संत सुखी विचरंति मही।।८।।

मुनि मानस पंकज भृंग भजे। रघुबीर महा रनधीर अजे।।
तब नाम जपामि नमामि हरी। भव रोग महागद मान अरी।।९।।

गुनशील कृपा परमायतनं। प्रनमामि निरन्तर श्रीरमनं।।
रघुनंद निकंदय द्वंद्वघन। महिपाल बिलोकय दीनजनं।।१०।।

बार बार वर मागउँ हरषि देहु श्रीरंग।।
पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग।।११।।

हे राम ! हे रमारमण (लक्ष्मीकान्त) ! हे जन्म–मरण के संताप नाश करने वाले। आपकी जय हो; आवागमन के भय से व्याकुल सेवक की रक्षा कीजिये। हे अवधपति ! हे देवताओं के स्वामी ! हे रमापति हे विभो। मैं शरणागत आपसे यही मांगता हूँ कि हे प्रभो ! मेरी कीजिये।।१।।

हे दस सिर और बीस भुजाओं वाले रावण का विनाश करके पृ के सब महान रोगों (कष्टों) को दूर करने वाले श्रीरामजी ! राक्षस स रूपी जो पतंगे थे, वे सब आपके बाणरूपी अग्नि के प्रचण्ड तेज से भ हो गये।।२।।

आप पृथ्वी मण्डल के अत्यन्त सुन्दर आभूषण हैं, आप श्रेष्ठ धनुष और तरकस धारण किये हुए हैं। महान मद, मोह और ममता रात्रि के अन्धकार समूह के नाश करने के लिये आप सूर्य के तेजो किरण समूह हैं।।३।।

कामदेव रूपी भील ने मनुष्य रूपी हिरनों के हृदय में कुभोग रू बाण मारकर उन्हें गिरा दिया है। हे नाथाहे (पाप–ताप हरण करने व हरे ! उसे मारकर विषयरूपी वन में भूले पड़े हुए इन पामर अनाथ ज की रक्षा कीजिये।।४।।

लोग बहुत से रोगों और वियोगों (दुखों) से मारे हुए हैं। ये आपके चरणों के निरादर के फल हैं। जो मनुष्य आपके चरण कमल प्रेम नहीं करते, वे अथाह भव सागर में पड़े हैं।।५।।

जिन्हें आपके चरण कमलों में प्रीति नहीं है वे नित्य ही अत्य दीन, मलिन (उदास) और दुखी रहते हैं और जिन्हें आपकी लीला क का आधार है, उनको संत और भगवान सदा प्रिय लगने लगते हैं।।६

उनमें न राग (आसक्ति) है, न लोभ; न मान है, न मद। उन सम्पत्ति (सुख) और विपत्ति (दुःख) समान है। इसी से मुनि लोग य (साधन) का भरोसा सदा के लिये त्याग देते हैं और प्रसन्नता के स आपके सेवक बन जाते हैं।।७।।

वे प्रेमपूर्वक नियम लेकर निरन्तर शुद्ध हृदय से आपके चरण कमलो सेवा करते रहते हैं और निरादर और आदर को समान मानकर वे सब सुखी होकर पृथ्वी पर विचरते हैं।।८।।

हे मुनियों के मन रूपी कमल के भ्रमर। हे महान रणधीर एवं अजेय रघुवीर ! मैं आपको भजता हूँ (आपकी शरण ग्रहण करता हूँ) आप न्म–मरण रूपी रोग की महान औषध और अभिमान के शत्रु हैं।।९।।

आप गुण, शील और कृपा के परम स्थान हैं। आप लक्ष्मीपति हैं, मैं पको निरन्तर प्रमाण करता हूँ। हे रघुनन्दन ! (आप जन्म–मरण, ख–दुःख, राग–द्वेषादि) द्वन्द्व–समूहों का नाश कीजिए। हे पृथ्वी की लना करने वाले राजन् इस दीन जन की ओर भी दृष्टि डालिये।।१०।।

मैं आपसे बार–बार यही वरदान माँगता हूँ कि मुझे आपके चरण मलों की अचल भक्ति और आपके भक्तों का सत्संग सदा प्राप्त हो। हे क्ष्मीपते ! हर्षित होकर मुझे यही वरदान दीजिये।।११।।

—●—

सनकादि मुनि द्वारा आनन्दकंद, सुख धाम, शोभा धाम श्रीराम चन्द्रजी भगवान की स्तुति

जय भगवंत अनंत अनामय। अनघ अनेक एक करुनामय।।१।।

जय निर्गुण जय जय गुन सागर। सुख मंदिर सुंदर अति नागर।।
जय इंदिरा रमन जय भूधर। अनुपम अज अनादि सोभाकर।।२।।

ग्यान निधान अमान मानप्रद। पावन सुजस पुरान बेद बद।।
तग्य कृतग्य अग्यता भंजन। नाम अनेक अनाम निरंजन।।३।।

सर्ब सर्बगत सर्ब उरालय। वससि सदा हम कहुँ परिपालय।।
द्वंद्व बिपति भव फंद विभंजय। हृदि बस राम काम मद गंजय।।४।।

परमानंद कृपायतन मन परिपूरन काम।
प्रेम भगति अनपायनी देहु हमहि श्रीराम।।५।।

देहु भगति रघुपति अति पावन। त्रिबिध ताप भव दाप नसावन।।
प्रनत काम सुरधेनु कलपतरु। होइ प्रसन्न दीजै प्रभु यह बरु।।६।।

भव बारिधि कुंभज रघुनायक। सेवत सुलभ सकल सुख दायक।।
मन संभव दारुन दुख दारय। दीनबंधु समता विस्तारय।।७।।

आस त्रास इरिषादि निवारक। बिनय बिबेक बिरति बिस्तारक।।
भूप मौलि मनि मंडन धरनी। देहि भगति संसृति सरि तरनी।।८।।

मुनि मन मानस हंस निरंतर। चरन कमल बंदित अज संकर।।
रघुकुल केतु सेतु श्रुति रच्छक। काल करम सुभाउ गुन भच्छक।।६।।

तारन तरन हरन सब दूषन। मोरे प्रभु तुम त्रिभुवन भूषन।।१०।।

प्रभु के वचन सुनकर चारों मुनि (सनकादि) पुलकित शरीर से प्रभु श्रीरामचन्द्र जी महाराज की स्तुति करते हुए कहते हैं कि हे भगवान आपकी जय हो। आप अन्त रहित, विकार रहित, पाप रहित, अनेक (सब रूपों में प्रकट), एक (अद्वितीय) एवं करुणामय हैं।।१।।

हे निर्गुण आपकी जय हो। हे गुणों के सागर ! आपकी जय हो, जय हो। आप सुख के धाम, अत्यन्त सुन्दर और अति चतुर हैं। हे लक्ष्मीपति ! आपकी जय हो। हे पृथ्वी के धारण करने वाले ! आपकी जय हो। आप उपमा रहित, अजन्मा, अनादि और शोभा की खान हैं।।२।।

आप ज्ञान के भण्डार (स्वयं) मान रहित और (दूसरों को) मान देने वाले हैं। वेद और पुराण आपका पवित्र सुन्दर यश गाते हैं। आप तत्व के जानने वाले, की हुई सेवा को मानने वाले और अज्ञान का नाश करने वाले हैं। हे निरंजन (मायारहित)! आपके अनेक (अनन्त) नाम हैं और कोई नाम नहीं है (अर्थात् आप सब नामों से परे हैं)।।३।।

आप सर्वरूप हैं, सबमें व्याप्त हैं और सबके हृदयरूपी घर में सदा निवास करते हैं, (अतः) आप हमारा परिपालन कीजिये। (राग–द्वेष, अनुकूलता–प्रतिकूलता, जन्म–मृत्यु आदि) द्वन्द्व, विपत्ति और जन्म मृत्यु के जाल को काट दीजिये। हे रामजी ! आप हमारे हृदय में बसकर काम और मद का नाश कीजिये।।४।।

आप परमानन्दस्वरूप, कृपा के धाम और मन की कामनाओं को परिपूर्ण (पूरा) करने वाले हैं। हे श्रीरामजी ! हमको अपनी अविचल प्रेमाभक्ति दीजिये।।५।।

हे रघुनाथजी ! आप हमें अपनी अत्यन्त पवित्र करने वाली और तीनों प्रकार के तापों और जन्म–मरण के क्लेशों का नाश करने वाली भक्ति दीजिये। हे शरणागतों की कामना पूर्ण करने के लिये कामधेनु और कल्पवृक्षरूप प्रभो ! प्रसन्न होकर हमें यही वर दीजिये।।६।।

हे रघुनाथजी ! आप जन्म–मृत्यु रूप समुद्र को सोखने के लिये अगस्तय मुनि के समान हैं। आप सेवा करने में सुलभ हैं तथा सब सुखों के देने वाले हैं। हे दीन बन्धों। मन से उत्पन्न दारुण दुःखों का नाश कीजिये और (हममें) समदृष्टि का विस्तार कीजिये।।७।।

आप (विषयों की) आशा, भय और ईर्ष्या आदि के निवारण करने वाले हैं तथा विनय, विवेक और वैराग्य के विस्तार करने वाले हैं। हे राजाओं के शिरोमणि एवं पृथ्वी के भूषण श्रीरामजी ! संसृति (जन्म–मृत्यु के प्रवाह) रूपी नदी के लिये नौका रूप अपनी भक्ति प्रदान कीजिये।।८।।

हे मुनियों के मनरूपी मानसरोवर में निरन्तर निवास करने वाले हंस। आपके चरणकमल ब्रह्माजी और श्री शिवजी के द्वारा वन्दित हैं। आप रघुकुल के केतु, वेदमर्यादा के रक्षक और काल, कर्म, स्वभाव तथा गुण (रूप बन्धनों) के भक्षक (नाशक) हैं।।९।।

आप तरन–तारन (स्वंय तरे हुए और दूसरों को तारने वाले) तथा सब दोषों को हरने वाले हैं। तीनों लोकों के विभूषण आप ही मेरे तथा तीनों लोकों के स्वामी हैं।।१०।।

— ● —

(१३)

आनन्दकन्द, मुकुन्द, भगवान श्रीराम के जन्म के पूर्व ब्रह्माजी द्वारा स्तुति

छं०

जय जय सुरनायक जन सुखदायक प्रनतपाल भगवंता।
गो द्विज हितकारी जय असुरारी सिंधुसुता प्रिय कंता।।
पालन सुर धरनी अद्‌भुत करनी मरम न जानइ कोई।
जो सहज कृपाला दीनदयाला करउ अनुग्रह सोई ।।१।।

जय जय अबिनासी सब घट बासी ब्यापक परमानंदा।
अबिगत गोतीतं चरित पुनीतं मायारहित मुकुंदा।।
जेहि लागि बिरागी अति अनुरागी बिगत मोह मुनिवृंदा।
निसि बासर ध्यावहिं गुन गन गावहिं जयति सच्चिदानंदा।।२।।

जेहिं सृष्टि उपाई त्रिबिध बनाई संग सहाय न दूजा।
सो करउ अघारी चिंत हमारी जानिअ भगति न पूजा।।
जो भव भय भंजन मुनि मन रंजन गंजन बिपति वरूथा।
मन वच क्रम बानी छाड़ि सयानी सरन सकल सुरजूथा।।३।।

सारद श्रुति सेषा रिषय असेषा जा कहुँ कोउ नहिं जाना।
जेहि दीन पिआरे बेद पुकारे द्रवउ सो श्रीभगवाना।।
भव वारिधि मंदर सब विधि सुंदर गुनमंदिर सुखपुंजा।
मुनि सिद्ध सकल सुर परम भयातुर नमत नाथ पद कंजा।।४।।

हे देवताओं के स्वामी, सेवकों को सुख देने वाले, शरणागत की रक्षा करने वाले भगवान। आपकी जय हो। जय हो !! हे गो–ब्राह्मणों का हित करने वाले, असुरों का विनाश करने वाले, समुद्र की कन्या (श्री लक्ष्मीजी) के प्रिय स्वामी ! आपकी जय हो ! हे देवता और पृथ्वी का पालन करने वाले ! आपकी लीला अद्‌भुत है, उसका भेद कोई नहीं जानता। ऐसे जो स्वभाव से ही कृपालु और दीनदयालु हैं, वे ही हम पर कृपा करें।।१।।

हे अविनाशी, सबके हृदय में निवास करने वाले (अन्तर्यामी), सर्वव्यापक परम आनन्द स्वरूप, अज्ञेय, इन्द्रियों से परे, पवित्रचरित्र, माया से रहित मुकुन्द (मोक्षदाता)! आपकी जय हो ! जय हो !! (इस लोक और परलोक के सब भोगों से) विरक्त तथा मोह से सर्वथा छूटे हुए (ज्ञानी) मुनिवृन्द भी अत्यन्त अनुरागी (प्रेमी) बनकर जिनका रात–दिन ध्यान करते हैं और जिनके गुणों के समूह का गान करते हैं, उन सच्चिदानन्द की जय हो।।२।।

जिन्होंने बिना किसी दूसरे संगी अथवा सहायक के अकेले ही (या स्वयं अपने को त्रिगुणरूप–ब्रह्मा, विष्णु, शिवरूप–बनाकर अथवा बिना किसी उपादान–कारण के अर्थात् स्वयं ही सृष्टि का अभिन्न निमित्तोपादान कारण बनकर) तीन प्रकार की सृष्टि उत्पन्न की, वे पापों का नाश करने वाले भगवान हमारी सुधि लें। हम न भक्ति जानते हैं, न पूजा। जो संसार के जन्म मृत्यु का नाश करने वाले, मुनियों के मन को आनन्द देने वाले और विपत्तियों के समूह को नष्ट करने वाले हैं। हम सब देवताओं के समूह मन, वचन और कर्म से चतुराई करने की बान छोड़कर उन भगवान की शरण (आये) हैं।।३।।

सरस्वतीजी, वेद, शेषजी और सम्पूर्ण ऋषि कोई भी जिनको नहीं जानते, जिन्हें दीन प्रिय हैं, ऐसा वेद पुकारकर कहते हैं, वे ही श्रीभगवान हम पर दया करें। हे संसाररूपी समुद्र के (मथने के) लिये मन्दराचलरूप, सब प्रकार से सुन्दर, गुणों के धाम और सुखों की राशि नाथ। आपके चरणकमलों में मुनि, सिद्ध और सारे देवता भय से अत्यन्त व्याकुल होकर नमस्कार करते हैं।।४।।

—●—

श्री नारद मुनि द्वारा आनन्दकन्द, शोभाधाम, कृपासागर श्रीराम चन्द्रजी महाराज की स्तुति

मामवलोकय पंकज लोचन। कृपा विलोकनि सोच विमोचन।।
नील तामरस स्याम काम अरि। हृदय कंज मकरंद मधुप हरि।।१।।

जातुधान बरूथ बल भंजन। मुनि सज्जन रंजन अघ गंजन।।
भूसुर ससि नव बृंद बलाहक। असरन सरन दीन जन गाहक।।२।।

भुज बल बिपुल भार महि खंडित। खर दूषन बिराध बध पंडित।।
रावनारि सुखरूप भूपबर। जय दसरथ कुल कुमुद सुधाकर।।३।।

सुजस पुरान बिदित निगमागम। गावत सुरमुनि संत समागम।।
कारुनीक ब्यलीक मद खंडन। सब बिधि कुसल कोसला मंडन।।४।।

कलि मल मथन नाम ममताहन। तुलसिदास प्रभु पाहि प्रनत जन।।५।।

कृपापूर्वक देख लेने मात्र से शोक के छुड़ाने वाले हे कमलनयन। मेरी ओर देखिये (मुझ पर भी कृपाद्रष्टि कीजिये) हे हरि ! आप नील कमल के समान श्यामवर्ण और कामदेव के शत्रु महादेव जी के हृदयकमल के मकरन्द (प्रेम–रस) के पान करने वाले भ्रमर हैं।।१।।

आप राक्षसों की सेना के बल को तोड़ने वाले हैं। मुनियों और संतजनों को आनन्द देने वाले और पापों का नाश करने वाले हैं। ब्राह्मणरूपी खेती के लिये आप नये मेघसमूह हैं और शरणहीनों को शरण देने वाले तथा दीन जनों को अपने आश्रय में ग्रहण करने वाले हैं।।२।।

अपने बाहुबल से पृथ्वी के बड़े भारी बोझ को नष्ट करने वाले, खर–दूषण और बिराध के बध करने में कुशल, रावण के शत्रु, आनन्दस्वरूप, राजाओं में श्रेष्ठ और दशरथ के कुलरूपी कुमुदिनी के चन्द्रमा श्रीरामजी ! आपकी जय हो।।३।।

आपका सुन्दर यश पुराणों, वेदों में और तन्त्रादि शास्त्रों में प्रकट है। देवता, मुनि और संतों के समुदाय उसे गाते हैं। आप करुणा करने वाले और झूठे मद का नाश करने वाले, सब प्रकार से कुशल (निपुण) श्रीअयोध्याजी के भूषण ही हैं।।४।।

आपका नाम कलियुग के पापों को मथ डालने वाला और ममता को मारने वाला है। हे तुलसीदास के प्रभु ! शरणागत की रक्षा कीजिये।।५।।

—●—

कुमारी कन्याओं को सुयोग्य, सुशील एवं सदाचारी व रामभक्त वर की प्राप्ति हेतु

प्रभु श्री रामचन्द्र जी महाराज की स्तुति

श्रीरामचन्द्र कृपालु भजु मन हरण भवभय दारुणं।
नवकंज–लोचन, कंज–मुख, कर–कंज, पद कंजारुणं।।१।।

कन्दर्प अगणित अमित छबि, नवनील–नीरद सुंदरं।
पट पीत मानहु तड़ित रुचि शुचि नौमि जनक सुतावरं।।२।।

भजु दीनबन्धु दिनेश दानव–दैत्यवंश–निकन्दनं।
रघुनंद आनँदकंद कौशलचंद दशरथ–नंदनं।।३।।

सिर मुकुट कुंडल तिलक चारु उदारु अंगविभूषणं।
आजानुभुज शर–चाप–धर, संग्राम–जित–खरदूषणं।।४।।

इति वदति तुलसीदास शंकर–शेष–मुनि–मन–रंजनं।
मम हृदय–कंज निवास कुरु, कामादि खलदल–गंजनं।।५।।

मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो वरु सहज सुन्दर साँवरो।
करुणा निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो।।६।।

एहि भांति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषी अलीं।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मंदिर चली।।७।।

जानि गौरि अनुकूल सिय हिय हरषु न जाय कहि।
मंजुल मंगल मूल बाम अंग फरकन लगे।।८।।

हे मन ! कृपालु श्री रामचन्द्रजी का भजन कर। वे संसार के जन्म–मरणरूपी दारुण भय को दूर करने वाले हैं, उनके नेत्र नव–विकसित कमल के समान हैं, मुख, हाथ और चरण भी लाल कमल के सदृश हैं।।१।।

उनके सौन्दर्य की छटा अगणित कामदेवों से बढ़कर है, मेघ के जैसा सुन्दर वर्ण है, पीताम्बर मेघ रूप शरीर में मानो बिजली के समान चमक रहा है, ऐसे पावनरूप जानकी पति श्रीरामजी को मैं नमस्कार करता हूँ।।२।।

हे मन! दीनों के बन्धु, सूर्य के समान तेजस्वी, दानव और दैत्यों के वंश का समूल नाश करने वाले, आनन्द कन्द, कोशल–देश रूपी आकाश में निर्मल चन्द्रमा के समान दशरथ नन्दन श्री रामचन्द्र जी का भजनकर।।३।।

जिनके मस्तक में रत्नजटित मकुट, कानों में कुण्डल, भाल पर सुन्दर तिलक और प्रत्येक अंग में सुन्दर आभूषण सुशोभित हो रहे हैं, जिनकी भुजाएँ घुटनों तक लंबी हैं जो धनुषवाण लिये हुए हैं; जिन्होंने संग्राम में खर–दूषण को जीत लिया है।।४।।

जो शिवजी–शेषजी और मुनियों के मन को प्रसन्न करने वाले और काम–क्रोध–लोभादि शत्रुओं का नाश करने वालें हैं। तुलसीदास प्रार्थना करता है कि वे श्री रघुनाथजी मेरे हृदय–कमल में सदा निवास करें।।५।।

श्री सीताजी द्वारा मन चाहे वर प्राप्ति हेतु गिरिजाजी (पार्वतीजी) के मन्दिर में पूजा के उपरान्त जगज्जनिनी माँ पार्वती जी द्वारा सीताजी को आसीस दी गई कि, जिसमें तुम्हारा मन अनुरक्त हो गया है वही स्वभाव से ही सुन्दर साँवला वर (श्री रामजी) तुमको मिलेगा। वह दया का खजाना और सुजान (सर्वज्ञ) हैं, तुम्हारे शील और स्नेह को मानते हैं। इस प्रकार श्री गौरी जी का आशीर्वाद सुनकर जानकी जी समेत सब सखियाँ हृदय में हर्षित हुईं। तुलसी दासजी कहते हैं – श्री शिव पत्नी भवानी जी को बार–बार पूजकर सीताजी प्रसन्न मन से राजमहल को लौट चलीं।

जगतमाता गौरी जी को अनुकूल जानकर सीताजी के हृदय को जो हर्ष हुआ वह कहा नहीं जा सकता। सुन्दर मंगलों के मूल उनके (श्री सीताजी के) बायें अंग फड़कने लगे।।६–८।।

अध्याय – २

भक्ति

इस अध्याय में भक्ति क्या है, भक्ति के प्रकार (नवधा भवित), भकि
के साधन, भक्तों के प्रकार (चार प्रकार के भक्त), श्री राम–भक्त के लक्ष
तथा भक्ति की महिमा तथा महत्व के विषय में बताया गया है। कलियु
में योग, यज्ञ, जप, तप, उपवास तथा ज्ञान व वैराग्य की साधना सरल
सुगम नहीं है। अतः मनुष्य–योनि का परम लक्ष्य (मोक्ष) प्राप्त करने क
लिये भक्ति का विशेष महत्व है। भक्ति का मार्ग योग, यज्ञ, जप तप, ज्ञा
एवं वैराग्य आदि सभी से सर्वथा स्वतन्त्र है। श्री राम की भक्ति प्राप
करने के लिये केवल सरल स्वभाव, सत्संग व भगवान शंकर के भजन क
आवश्यकता है।

— ● —

(२.१)

भक्ति क्या है (?)

मैं सेवक (दास) हूँ और भगवान (श्रीराम) मेरे सेव्य (स्वामी) हैं, इस भाव के साथ सर्वसमर्थ प्रभु श्री रामचन्द्रजी महाराज के चरण कमलों में प्रीति, उनका ध्यान व भजन भक्ति है।

- ऐसी सुगम और परम सुख देने वाली हरिभक्ति जिसके हृदय के अन्दर बसती है, वह चर–अचर जो भी हो, धन्य है व परम भाग्यवान है। काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि दुष्टों का समूह उसके पास नहीं जाता। उसे स्वप्न में भी लेश मात्र दुख नहीं होता। बड़े–बड़े मानस रोग, काम, क्रोध, लोभ, भय, ममता, ईर्ष्या, हर्ष–विषाद, दुष्टता, मनकी कुटिलता, अहंकार, दम्भ, कपट, मद और मान तथा तृष्णा और तीन प्रकार (पुत्र, धन, और मान) की प्रबल इच्छाएं, जिनके वशीभूत होकर सब जीव दुखी होते रहते हैं, उसको नहीं व्यापते।

- पर ऐसी हरि भक्ति श्रीराम की कृपा के बिना नहीं मिलती और प्रभु कृपा बिना सत्संग के प्राप्त नहीं होती। प्रभु कृपा पाने के लिये प्रभु (श्रीराम) के चरणों में प्रीति, उनके कथा–प्रसंगों का ध्यान, गान व भजन, प्रभु कृपा पर अटल विश्वास तथा सभी आशा भरोसा छोड़कर प्रभु पर ही भरोसा (विश्वास) होना चाहिए।

- प्रभु श्री रामचन्द्रजी ने अपने श्री मुख से शबरीजी से स्वयं कहा है कि मैं तो केवल भक्ति ही का सम्बन्ध मानता हूँ (पृष्ठ ६५१ अरण्यकाण्ड दो ३४–३५)

"कह रघुपति सुनु भामिनि वाता। मानउँ एक भगति कर नाता"।।

- श्री अयोध्या पुरी के वासियों को हितोपदेश करते हुए प्रभु श्री रामच जी महाराज ने कहा है, कि इस लोक और परलोक में सुख चाह वालों के लिये भक्ति का मार्ग ही सबसे सुलभ और सुखदायक है प्रभु ने यह भी कहा है, कि मेरी भक्ति श्री शंकरजी के भजन तथ सत्संग के बिना नहीं मिल सकती। (उत्तरकाण्ड पृष्ठ ६३६ दो० ४

"औरउ एक गुपुतमत सवहि कहउँ कर जोरि।
संकर भजन बिना नर भगति न पावइ मोरि"।।

- भक्ति मार्ग में न योग की आवश्यकता है, न यज्ञ, न जप, तप अ उपवास की। यहाँ तो केवल इतना ही आवश्यक है कि सरल स्वभ हो, मन में कुटिलता न हो और जो कुछ मिले उसी में सदा सन्तो रखें। (उत्तरकाण्ड पृष्ठ ६३६)

—●—

(२.२)

नवधा भक्ति (भक्ति के प्रकार)

प्रभु श्री रामचन्द्रजी द्वारा अरण्यकाण्ड में शबरीजी को भक्ति की महिमा बताते हुए नौ प्रकार की भक्ति (नवधा भक्ति) प्रतिपादित की गई है, जो निम्नवत् है: –

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा। दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।।

- पहली भक्ति है संतों का सत्संग।
- दूसरी भक्ति है श्री रामचन्द्रजी महाराज के कथा–प्रसंगों में प्रेम।

गुर पद पकंज सेवा तीसरि भगति अमान।
चौथि भगत मम गुन गन करइ कपटि तज गान।।

- तीसरी भक्ति है अभिमान रहित होकर गुरु के चरण कमलों की सेवा।
- चौथी भक्ति है कि कपट छोड़कर प्रभु श्रीराम के गुण समूहों का गान किया जाय।

मंत्र जाप मम दृढ़ विस्वासा। पंचम भगति जो वेद प्रकासा।।
छठ दम सील विरत वहु करमा। निरत निरंतर सज्जन धरमा।।

- मेरे (राम) मंत्र का जाप और मुझमें (श्रीराम में) दृढ़ विश्वास–यह पाँचवी भक्ति है, जो वेदों में प्रसिद्ध है।
- छठी भक्ति है, इन्द्रियों का निग्रह, शील (अच्छा स्वभाव या चरित्र), बहुत कार्यों से वैराग्य और निरंतर संत पुरुषों के धर्म (आचरण) में लगे रहना।

सातवँ सम मोहि मय जग देखा। मोतें संत अधिक कर लेखा।।
आठवँ जथालाभ संतोषा। सपनेहु नहिं देखइ पर दोषा।।

- सातवीं भक्ति है जगत् भर को समभाव से मुझमें ओतप्रोत (राममय देखना और संतों को मुझसे भी अधिक करके मानना। आठवीं भक्ति है जो कुछ मिल जाय, उसी में संतोष करना और स्वप्न में भी परा दोषों को न देखना।

नवम सरल सब सन छलहीना। मम भरोस हियँ हरष न दीना।।
नव महुँ एकउ जिन्ह के होई। नारि पुरुष सचराचर कोई।।

- नवीं भक्ति है सरलता और सबके साथ कपटरहित वर्ताव करना हृदय में मेरा भरोसा रखना और किसी भी अवस्था में हर्ष और दैन्य (विषाद) का न होना। इन नवों में से जिनके एक भी होती है, व स्त्री, पुरुष, जड़ चेतन कोई भी हो– प्रभु श्री राम जी को वह अत्यन्त प्रिय है।

— ● —

(२.३)

भक्ति के साधन

प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती। निज निज कर्म निरत श्रुति रीती।।१।।

संत चरन पंकज अति प्रेमा। मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा।।
गुरु पितु मातु बंधु पति देवा। सब मोहि कहँ जानै दृढ़ सेवा।।२।।

मम गुन गावत पुलक सरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा।।
काम आदि मद दंभ न जाके। तात निरंतर बस मैं ताकें।।३।।

बचन कर्म मन मोरि गति भजनु करहिं निःकाम।
तिन्ह के हृदय कमल महुँ करउँ सदा बिश्राम।।४।।

पहले तो ब्राह्मण के चरणों में अत्यन्त प्रीति हो और वेद की रीति अनुसार अपने–अपने (वर्णाश्रम के) कर्मों में लगा रहे।।१।।

जिसका संतों के चरण कमलों में अत्यन्त प्रेम हो, मन वचन और र्म से भजन का दृढ़ नियम और जो मुझको (श्रीराम को) ही गुरु, पिता, ता, भाई, पति और देवता सब कुछ जाने और सेवा में दृढ़ हो;।।२।।

मेरा गुण गाते समय जिसका शरीर पुलकित हो जाय, वाणी गदगद जाय और नेत्रों से (प्रेमाश्रुओं का) जल बहने लगे और काम, मद और भ आदि जिसमें न हों, हे भाई ! मैं (श्रीराम) सदा उसके वश में रहता ।।३।।

जिनको कर्म, वचन और मन से मेरी ही गति है; और जो निष्काम व से भजन करते हैं, उनके हृदय–कमल में मैं (श्रीराम) सदा विश्राम या करता हूँ।।४।।

—●—

भक्तों के प्रकार

श्रीराम चरितमानस के बालकाण्ड में श्रीराम नाम की वन्दना
रामनाम की महिमा के प्रसंग में चार प्रकार के भक्तों का वर्णन हैः

1- **अर्थाथी** – धनादि की चाह से भजने वाले।

2- **आर्त** – संकट की निवृत्ति के लिये भजने वाले।

3- **जिज्ञासु** – भगवान को जानने की इच्छा से भजने वाले त

4- **ज्ञानी** – भगवान को तत्व से जानकर स्वाभाविक ही प्रेम
भजने वाले।

चारों राम भक्त भगवान को प्रिय है। अतः भगवान श्रीराम के
गुण एवं कथा–प्रसंग का ध्यान, गान, भजन एवं कीर्तन आदि जिस प्र
से भी किया जाय, सदा कल्याणकारी है।

— ● —

(२.५)

राम भक्त के लक्षण

ज्ञानी मुनि याज्ञवल्क्यजी भगवान शिव के विवाह, स्वामिकार्तिक ; जन्म, तारकासुर के वध तथा अन्यत्र श्री शिव–पार्वती जी के शुभ रित्रों का वर्णन करते हुए मुनि भरद्वाज जी से कहते हैं,

शिव पद कमल जिन्हहि रति नाहीं। रामहि ते सपनेहुँ न सोहाहीं।।
बिनु छल विस्वनाथ पद नेहू। राम भगत कर लच्छन एहू।।

अर्थात् श्री शिव जी के चरण कमलों में जिनकी प्रीति नहीं है, वे रामचन्द्र जी को स्वप्न में भी अच्छे नहीं लगते। विश्वनाथ श्री शिवजी ; चरणों में निष्कपट (विशुद्ध प्रेम होना यही राम भक्त का लक्षण है)।

नारद मुनि का काम देव को जीतने के कारण अभिमान और माया ा प्रभाव, विश्वमोहिनी का स्वयंवर, नारद मुनि द्वारा शिवगणों तथा गवान को शाप और नारद मुनि के मोह भंग के प्रसंग में (बाल काण्ड ष्ठ १३१) भगवान ने स्वयं कहा है–

जपहु जाइ संकर सत नामा। होइहि हृदय तुरत विश्रामा।।
कोउ नहि सिव समान प्रिय मोरे। असि परतीति तजहु जन भोरें।।

जाकर शंकर जी के शतनाम का जप करो, इससे हृदय में तुरंत ांति मिलेगी। शिवजी के समान मुझे कोई प्रिय नहीं है, इस विश्वास को ूलकर भी न छोड़ना।

जेहि पर कृपा न करहिं पुरारी। सो न पाव मुनि भगति हमारी।।

हे मुनि ! पुरारि (शिवजी) जिस पर कृपा नहीं करते, वह मेरी ाक्ति नहीं पाता।

अतः श्री राम की भक्ति पाने के लिये मनुष्य को प्रतिदिन श्री शिवजी के शतनाम का जप करना चाहिये ।

— ● —

(२.६)

"भगवान रुद्र की स्तुति का अष्टक"

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं। विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपं।।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं। चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं।।

हे मोक्ष स्वरूप, विभु, व्यापक, ब्रह्म और वेद स्वरूप, ईशान दिशा के ईश्वर तथा सबके स्वामी श्री शिवजी ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ निजस्वरूप में स्थित (अर्थात् मर्यादारहित), (मायिक) गुणों से रहित भेदरहित, इच्छारहित, चेतन आकाश रूप एवं आकाश को ही वस्त्र रूप धारण करने वाले दिगम्बर (अथवा आकाश को भी आच्छादित करने वा आपको मैं भजता हूँ।।१।।

निराकारमोंकारमूलं तुरीयं। गिरा ग्यान गोतीतमीशं गिरीशं।।
करालं महाकाल कालं कृपालं। गुणागार संसारपारं नतोऽहं।।

निराकार, ओंकार के मूल, तुरीय (तीनों गुणों से अतीत), वा ज्ञान और इन्द्रियों से परे, कैलाशपति, विकराल, महाकाल के भी का कृपालु, गुणों के धाम, संसार से परे आप परमेश्वर को मैं नमस्कार कर हूँ।।२।।

तुषाराद्रि संकाश गौरं गभीरं। मनोभूत कोटि प्रभा श्री शरीरं।।
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारू गंगा। लसद्भालबालेन्दु कंठे भुजंगा।

जो हिमाचल के समान गौरवर्ण तथा गम्भीर है, जिनके शरीर करोड़ों कामदेवों की ज्योति एवं शोभा है, जिनके सिर पर सुन्दर न गंगा जी विराजमान हैं, जिनके ललाट पर द्वितीय का चन्द्रमा और में सर्प सुशोभित हैं।।३।।

चलत्कुंडलं भ्रू सुनेत्रं विशालं। प्रसन्नानं नीलकंठं दयालं।।
मृगाधीश चर्माम्बरं मुण्डमालं। प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि।।

जिनके कानों में कुण्डल हिल रहे हैं, सुन्दर भ्रकुटी और विशाल नेत्र हैं, जो प्रसन्न मुख, नीलकंठ और दयालु हैं, सिंह चर्म का वस्त्र धारण किये और मुण्डमाला पहने हैं, उन सबके प्यारे और सबके नाथ (कल्याण करने वाले) श्री शंकर जी को मैं भजता हूँ।।४।।

प्रचंडं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं। अखंडं अजं भानुकोटि प्रकाशं।।
त्रयः शूल निर्मूलनं शूलपाणिं। भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यं।।

प्रचण्ड (रुद्ररूप), श्रेष्ठ, तेजस्वी, परमेश्वर, अखण्ड, अजन्मा, करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाशवाले, तीनों प्रकार के शूलों (आधि दैविक, आधि भौतिक तथा आध्यात्मिक), दुःखों को निर्मूल करने वाले, हाथ में त्रिशूल धारण किये, भाव (प्रेम) के द्वारा प्राप्त होने वाले, भवानी जी के पति श्री शंकर जी को मैं भजता हूँ।।५।।

कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी। सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी।।
चिदानन्द संदोह मोहापहारी। प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी।।

कलाओं से परे, कल्याणस्वरूप, कल्पका अन्त (प्रलय) करने वाले, सज्जनों को सदा आनन्द देने वाले, त्रिपुर के शत्रु सच्चिदानन्दघन, मोह को हरने वाले, मन को मथ डालने वाले, कामदेव के शत्रु, हे प्रभो ! प्रसन्न होइये।।६।।

न यावद् उमानाथ पादारविन्दं। भजंतीह लोके परे वा नराणां।।
न तावत्सुखं शान्ति सन्तापनाशं। प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं।।

जब तक पार्वती के पति आपके चरणकमलों को मनुष्य नहीं भजते, तब तक उन्हें न तो इहलोक और परलोक में सुख शान्ति मिलती है और न उनके तापों का नाश होता है। अतः हे समस्त जीवों के अन्दर (हृदय में) निवास करने वाले प्रभो ! प्रसन्न होइये।।७।।

न जानामि योगं जपं नैव पूजां। नतोऽहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यं।।
जरा जन्म दुःखौध तातप्यमानं। प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो।।

मैं न तो योग जानता हूँ, न जप ओर न पूजा ही। हे शम्भो ! मैं तो सदा–सर्वदा आपको ही नमस्कार करता हूँ। हे प्रभो ! बुढ़ापा तथा जन्म (मृत्यु) के दुःखसमूहों से जलते हुए मुझ दुःखी की दुःख से रक्षा कीजिये। हे ईश्वर ! हे शम्भो ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ।।८।।

श्लोक – रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।
ये पठन्ति नरा भकत्या तेषां शम्भु प्रसीदति।।

भगवान रुद्र की स्तुति का यह अष्टक उन शंकर जी की तुष्टि (प्रसन्नता) के लिये ब्राह्मण द्वारा कहा गया। जो मनुष्य इसे भक्तिपूर्वक पढ़ते हैं, उन पर भगवान शम्भु प्रसन्न होते हैं तथा उन्हें श्री राम की भक्ति प्राप्त होती है।।९।।

— ● —

(२.७)

भक्ति की महिमा तथा महत्व

प्रभु श्रीराम चन्द्रजी महाराज ने गुरु वशिष्ट जी तथा संतों की सभा में अपने श्रीमुख से भक्ति तथा मनुष्य शरीर का महत्व बताते हुए कहा है कि : –

बड़े भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा।।
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहिं परलोक सुधारा।।

- बड़े भाग्य से यह मनुष्य शरीर मिला है। सब ग्रन्थों ने यही कहा है कि यह शरीर देवताओं को भी दुर्लभ है (कठिनता से मिलता है)। यह साधन का धाम और मोक्ष का दरवाजा है। इसे पाकर भी जिसने परलोक न बना लिया, वह परलोक में दुख पाता है तथा कालपर, कर्म पर ओर ईश्वर पर मिथ्या दोष लगाता है।

एहि तन कर फल विषय न भाई। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई।।
नर तनु पाई विषयँ मन देहीं। पलट सुधा ते सठ विष लेहीं।।

- हे भाई ! इस शरीर के प्राप्त होने का फल विषय भोग नहीं है। (इस जगत के भोगों की तो बात ही क्या) स्वर्ग का भोग भी बहुत थोड़ा है और अन्त में दुख देने वाला है। अतः जो लोग मनुष्य शरीर पाकर विषयों में मन लगा देते हैं, वे मूर्ख अमृत को छोड़कर विष ले लेते हैं।
- यह मनुष्य शरीर भवसागर से तरने के लिये जहाज है, अतः ईश्वर की कृपा से, देवताओं को भी दुर्लभ, मनुष्य शरीर पाकर भी जो व्यक्ति सरल–सुलभ, सुखदायक हरि भक्ति में अपने को अनुरक्त नहीं करता, वह बड़ा अभागा है।

अतः प्रभु कृपा से, देव दुर्लभ, मनुष्य शरीर प्राप्त
प्रत्येक व्यक्ति को बिना अवसर गंवाये
प्रभु (श्रीराम) की भक्ति में लग जाना चाहिये।
क्योंकि, विशेषकर, कलियुग में श्रीराम
की भक्ति ही कल्याण व मोक्ष का एकमात्र सबसे सरल व सुगम उपाय है।

अध्याय – ३

सत्संग

इस अध्याय में सत्संग की महिमा तथा संतों के गुण एवं लक्षणों
वर्णन किया गया है। भक्ति मार्ग में सत्संग का विशेष महत्व है। यद्य
संतों का मिलन (सत्संग) प्रभु श्री राम की कृपा से ही सुलभ होता
तथापि प्रत्येक व्यक्ति को संतों के गुण एवं लक्षणों का ज्ञान होना अ
आवश्यक है। क्योंकि विशेषकर कलयुग में, मिथ्या आडंबर व ढोंग
कारण सच्चे संतों की पहचान काफी कठिन है। अतः संतों/सदगुरु
पहचान में विशेष सावधानी की आवश्यकता है। संतों के गुण व लक्ष
का अध्ययन इस दिशा में काफी सहायक सिद्ध हो सकता है।

— ● —

(३.१)

सत्संग की महिमा

गोस्वामी तुलसीदासजी महाराज ने गुरु, ब्राह्मण व संतों की वन्दना करते हुए कहा है; (वा०का० पृष्ठ संख्या ६)

मति कीरति गति भूत भलाई। जब जेहिं जतन जहां जेहि पाई।।
सो जानब सतसंग प्रभाऊ। लोकहुँ बेद न आन उपाऊ।।

तीनों लोकों में जिसने जिस समय जहाँ कहीं भी जिस किसी यत्न से बुद्धि, कीर्ति, विभूति (ऐश्वर्य) और भलाई पायी है, सो सब सत्संग का ही प्रभाव समझना चाहिये। वेदों में और लोक में इनकी प्राप्ति का दूसरा कोई उपाय नहीं है।

बिनु सतसंग बिवेक न होई। राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।।
सतसंगत मुद मंगल मूला। सोई फल सिधि सब साधन फूला।।

बिना सत्संग के विवेक नहीं होता और श्रीरामजी की कृपा के बिना वह सत्संग सहज में मिलता नहीं। सत्संगति आनन्द और कल्याण की जड़ है। सत्संग की सिद्धि (प्राप्ति) ही फल है और सब साधन तो फूल हैं।

सठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परस कुधात सुहाई।।

दुष्ट भी सत्संग पाकर सुधर जाते हैं, जैसे पारस के स्पर्श के लोहा सुहावना हो जाता है (सुन्दर सोना बन जाता है)।

सत्संग की महिमा का उल्लेख करते हुए कहा गया है; (सु०का० दो० संख्या ४)

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सत्संग।।

श्री हनुमान जी द्वारा लंका में प्रवेश के समय लंकिनी नाम की राक्षसी हनुमान जी से भेंट होने पर कहती है कि हे तात! स्वर्ग और मोक्ष के सब सुखों को तराजू के एक पलड़े में रखा जाय, तो भी वे सब मिलकर (दूसरे पलड़े पर रखे हुए) उस सुख के बराबर नहीं हो सकते, जो लव (क्षण) मात्र के सत्संग में होता है।

(३.२)

संतों के गुण एवं लक्षण

श्री भरतजी द्वारा संत और असंतों के भेद के विषय में अनुरोध करने पर भगवान श्रीराम द्वारा संतों के निम्न लक्षण (गुण) बतलाये गये हैं:– (उ०का० पृष्ठ संख्या ६२६–६३०)

बिषय अलंपट सील गुनाकर। पर दुख दुख सुख सुख देखे पर।।
सम अभूतरिपु बिमद बिरागी। लोभामरष हरष भय त्यागी।।

संत विषयों में लिप्त नहीं होते, शील और सदगुणों की खान होते हैं। उन्हें पराया दुख देखकर दुख और सुख देखकर सुख होता है। वे (सब में, सर्वत्र, सब समय) समता रखते हैं, उनके मन कोई उनका शत्रु नहीं, वे मद से रहित और वैराग्यवान होते हैं तथा लोभ, क्रोध, हर्ष और भय का त्याग किये हुए रहते हैं।

कोमलचित दीनन्ह पर दाया। मन बच क्रम मम भगति अमाया।।
सबहि मानप्रद आपु अमानी। भरत प्रान सम मम ते प्रानी।।

उनका चित्त बड़ा कोमल होता है। वे दीनों पर दया करते हैं तथा मन, वचन और कर्म से मेरी निष्कपट (विशुद्ध) भक्ति करते हैं। सबको सम्मान देते हैं, पर स्वयं मान रहित होते हैं। हे भरत ! वे प्राणी (संतजन) मेरे प्राणों के समान हैं।

बिगत काम मम नाम परायन। सांति बिरत बिनती मुदितायन।।
सीतलता सरलता मयत्री। द्विज पद प्रीति धर्म जनयत्री।।

उनको कोई कामना नहीं होती। वे मेरे नाम के परायण होते हैं। शान्ति, वैराग्य, विनय और प्रसन्नता के घर होते हैं। उनमें शीतलता, सरलता

सबके प्रति मित्रभाव और ब्राह्मण के चरणों में प्रीति होती है, जो धर्म को उत्पन्न करने वाली है।

सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं। परुष बचन कबहूँ नहिं बोलहिं।।

वे (संत) शम (मन के निग्रह), दम (इन्द्रियों के निग्रह) नियम और नीति से कभी विचलित नहीं होते और कभी कठोर वचन नहीं बोलते।

निंदा अस्तुति उभय सम ममता मम पद् कंज।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय गुन मंदिर सुख पुंज।।

जिन्हें निन्दा और स्तुति (बड़ाई) दोनों समान हैं और मेरे चरण कमलों में जिनकी ममता है, वे गुणों के धाम और सुख की राशि संतजन मुझे प्राणों के समान प्रिय हैं।

संतों की वन्दना करते हुए गोस्वामी तुलसीदासजी ने संतों के गुण (लक्षणों) के विषय में कहा है; (वा०का०दो० संख्या ३क)

वंदउँ संत समान चित हित अनहित नहिं कोइ।
अंजलि गत सुभ सुमन जिमि सम सुगंध कर दोइ।।

मैं संतों को प्रणाम करता हूँ, जिनके चित्त में समता है, जिनका न कोई मित्र है और न शत्रु। जैसे अंजलि में रखे हुए सुन्दर फूल (जिस हाथ ने फूलों को तोड़ा और जिसने उनको रखा उन) दोनों ही हाथों को समान रूप से सुगन्धित करते हैं (वैसे ही संत शत्रु और मित्र दोनों का ही समान रूप से कल्याण करते हैं)

साधु चरित सुभ चरित कपासू। निरस बिसद गुनमय फल जासू।।
जो सहि दुख पर छिद्र दुरावा। वंदनीय जेहिं जगजस पावा।।

संतों का चरित्र कपास के चरित्र (जीवन) के समान शुभ है, जिसका फल नीरस, विशद और गुणमय होता है। (कपास की डोडी नीरस होती है संत चरित्र में भी विषयासक्ति नहीं है, इससे वह भी नीरस है, कपास उज्जवल होता है, संत का हृदय भी अज्ञान और पापरूपी अन्धकार से रहित होता है, इसलिये वह विशद है, और कपास में गुण (तन्तु) होते हैं, इसी प्रकार संतों का चरित्र भी सदगुणों का भण्डार होता है, इसलिये वह गुणमय है।) (जैसे कपास का धागा सुई के किये हुए छेद को अपना तन देकर ढक देता है, अथवा कपास जैसे लोढ़े जाने काते जाने और बुने जाने का कष्ट सहकर भी वस्त्र के रूप में परणित होकर दूसरों के गोपनीय स्थानों को ढकता है, उसी प्रकार संत स्वयं दुख सहकर दूसरों के छिद्रों (दोषों) को ढकते हैं, जिसके कारण उन्होंने जगत में वन्दनीय यश प्राप्त किया है)। (पृ०सं० 4 वा०का०)

पंपासरोवर के निकट प्रभु श्री रामजी के विश्रामस्थल पर महामुनि नारदजी द्वारा संतों के लक्षणों के विषय में प्रश्न करने पर भगवान श्री राम जी अपने श्रीमुख से संतों के लक्षण का वर्णन करते हुए कहते हैं; (पृ० संख्या ६६१–६६२ अर०का०)

षट बिकार जित अनघ अकामा। अचल अकिंचन सुचि सुख धामा।।
अमित बोध अनीह मित भोगी। सत्यसार कबि कोबिद जोगी।।

संत (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर –इन) छः विकारों (दोषों) को जीते हुए, पापरहित, कामना रहित, निश्चल (स्थिर बुद्धि), अकिंचन (सर्वत्यागी), बाहर भीतर से पवित्र, सुख के धाम, असीम ज्ञानवान, इच्छारहित, मिताहारी, सत्यनिष्ठ, कवि, विद्वान, योगी,

सावधान मानद मदहीना। धीर धर्म गति परम प्रबीना।।

सावधान, दूसरों को मान देने वाले, अभिमान रहित, धैर्यवान, धर्म के ज्ञान और आचरण में अत्यन्त निपुण;

गुनागार संसार दुख रहित बिगत संदेह।
तजि मम चरन सरोज प्रिय तिन्ह कहुँ देह न गेह।।

गुणों के घर, संसार के दुखों से रहित और संदेहों से सर्वथा छूटे हुए होते हैं। मेरे चरण कमलों को छोड़कर उनको न देह ही प्रिय होती है, न घर ही।।

निज गुन श्रवन सुनत सकुचाहीं। पर गुन सुनत अधिक हरषाहीं।।
सम सीतल नहिं त्यागहि नीती। सरल सुभाउ सबहि सन प्रीती।।

कानों से अपने गुण सुनने में सकुचाते हैं, दूसरों के गुण सुनने से विशेष हर्षित होते हैं। सम और शीतल हैं, न्याय का कभी त्याग नहीं करते। सरल स्वभाव होते हैं और सभी से प्रेम रखते हैं।

जप तप ब्रत दम संजम नेमा। गुरु गोबिंद बिप्र पद प्रेमा।।
श्रद्धा क्षमा मयत्री दाया। मुदिता मम पद प्रीति अमाया।।

वे जप, तप, व्रत, दम, संयम और नियम में रत रहते हैं और गुरु, गोविन्द तथा ब्राह्मणों के चरणों में प्रेम रखते हैं। उनमें श्रद्धा, क्षमा, मैत्री, दया, मुदिता (प्रसन्नता) और मेरे चरणों में निष्कपट प्रेम होता है;

बिरत बिबेक बिनय बिग्याना। बोध जथारथ बेद पुराना।।
दंभ मान मद करहिं न काऊ। भूलि न देहिं कुमारग पाऊ।।

तथा वैराग्य, विवेक, विनय, विज्ञान (परमात्मा के तत्व का ज्ञान) और वेद पुराणों का यथार्थ ज्ञान रहता है। वे दम्भ, अभिमान और मद कभी नहीं करते और भूल कर भी कुमार्ग पर पैर नहीं रखते;

गावहिं सुनहिं सदा मम लीला। हेतु रहित पर हित रत सीला।।

तथा सदा मेरी लीलाओं को गाते सुनते रहते हैं और बिना ही कारण दूसरों के हित में लगे रहने वाले होते हैं।

— ● —

अध्याय – ४

नीति

श्री राम चरित मानस में भिन्न–भिन्न प्रसंगों के अन्तर्गत स्थान–स्थ
पर नीति (अर्थात् भिन्न–भिन्न परिस्थितियों में क्या उचित है क्या अनुचित
अथवा क्या करना चाहिए क्या नहीं ?) का उल्लेख है। उक्त नी
वाक्यों/विषयों का संकलन इस अध्याय में करने का प्रयास किया ग
है। जगत के कल्याण हेतु नीति की जानकारी देश काल के अनुस
समाज के प्रत्येक वर्ग/व्यक्ति यथा राजा/प्रजा, गुरु/शिष्य, मि
संन्यासी/गृहस्थ, पिता/पुत्र, माता/पिता तथा पति–पत्नी आदि
होना हितकारी है।

— ● —

(४.१)

१. भगवान श्री शिवजी द्वारा माता पार्वती जी को पिता दक्ष के उत्सव में जाने हेतु आज्ञा मांगने पर हितोपदेश;

- **जदपि मित्र प्रभु पितु गुरु गेहा। जाइअ बिनु बोलेहुँ न सँदेहा।।**
  तदपि विरोध मान जहँ कोई। तहाँ गएँ कल्यान न होई।।

यद्यपि मित्र, स्वामी, पिता और गुरु के घर बिना बुलाये जाना चाहिये तो भी जहां कोई विरोध मानता हो, उसके घर जाने से कल्याण नहीं होता। (वा०का० पृष्ठ संख्या ६६)

२. भगवान् श्री राम वन जाते समय नीति का विचार कर, प्रजा (अयोध्यावासियों) के हितार्थ, घर (अयोध्या) में रहने हेतु लक्ष्मणजी से कहते हैं: –

- **जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृपु अवसि नरक अधिकारी।**
  रहहु तात असि नीति विचारी।

जिसके राज्य में प्यारी प्रजा दुखी रहती है, वह राजा अवश्य ही नरक का अधिकारी होता है। हे तात ! ऐसी नीति विचार कर तुम घर रह जाओ। (वा०का० पृष्ठ संख्या ३८६)

३. वन में कपट तपस्वी की बातों में आकर राजा प्रतापभानु द्वारा अपना वास्तविक नाम प्रकट करने पर तपस्वी द्वारा बताई गई नीति

- **सुन महीस असि नीति जहँ तहँ नाम न कहहिं नृप**

हे राजन ! सुनो ऐसी नीति है कि राजा लोग जहाँ तहाँ अपना नाम नहीं कहते। (वा०का० पृष्ठ संख्या १५२)

४. श्री राम चन्द्रजी द्वारा दण्डक वन में सूर्पणखा को लक्ष्मणजी के पास भेजने पर लक्ष्मणजी का कथन;

- **सेवक सुख चह मान भिखारी, व्यसनी धन सुभ गति बिभिचारी।।**
  लोभी जसु चह चार गुमानी। नभ दुहि दूध चहत ए प्रानी।।

सेवक सुख चाहे, भिखारी सम्मान चाहे, व्यसनी (जिसे जुआ, शराब आदि का व्यसन हो) धन और व्यभिचारी शुभगति चाहे, लोभी यश चाहे और अभिमानी चारों फल–अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष चाहे तो ये सब प्राणी आकाश को दुहकर दूध लेना चाहते हैं (अर्थात् असम्भव को सम्भव करना चाहते हैं)। (अर०का० पृष्ठ संख्या ६२६)

— • —

१. श्री लक्ष्मण जी द्वारा नाक कान काटे जाने पर सूर्पणखा द्वारा रा
की सभा में श्री रामजी के विरुद्ध रावण को भड़काते हुए नीति
उपदेश;

- **राज नीति बिनु धन विनु धर्मा। हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा।।
विद्या बिनु बिबेक उपजाएँ। श्रम फल पढ़े किएँ औरु पाएँ।।
संग ते जती कुमंत्र ते राजा। मान ते ग्यान पान ते लाजा।।
प्रीति प्रनय बिनु मद ते गुनी। नासहिं बेगि नीति अस सुनी।।**

नीति के बिना राज्य और धर्म के बिना धन प्राप्त करने से, भगवान
समर्पण किये बिना उत्तम कर्म करने से और विवेक उत्पन्न किये बि
विद्या पढ़ने से परिणाम में श्रम ही हाथ लगता है। विषयों के संग
संन्यासी, बुरी सलाह से राजा, मान से ज्ञान, मदिरापान से लज्जा, नम्र
के बिना प्रीती और मद (अहंकार) से गुणवान शीघ्र ही नष्ट हो जाते
इस प्रकार की नीति मैंने सुनी है। (अर०का० पृष्ठ संख्या ६३३–६३४

२. श्री सीता हरण हेतु मारीच को कपट मृग बनने के लिये रावण द्वा
विवश करने पर मारीच द्वारा विचारित नीति।

- **तब मारीच हृदय अनुमाना। नबहि विरोधें नहिं कल्याना।
सस्त्री, मर्मी, प्रभु सठ धनी। बैद बंदि कवि भानस गुनी।।**

तब मारीच ने हृदय में अनुमान किया कि शस्त्री (शस्त्रधारी), मर्मी (
जानने वाला) समर्थ स्वामी, मूर्ख, धनवान्, वैद्य, भाट, कवि और रसोइ
इन नौ व्यक्तियों से विरोध (वैर) करने में कल्याण (कुशल) नहीं होत
(अर०का० पृष्ठ संख्या ६३८)

३. श्री रामजी द्वारा वध किये जाने पर वालि द्वारा भगवान श्रीराम से व्याध की तरह (छिपकर) मारे जाने का कारण पूछे जाने पर श्री रामजी द्वारा बताई गई नीति।

- **अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी।।**
  इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधे कछु पाप न होइ।।

श्री रामजी ने कहा – हे मूर्ख ! सुन, छोटे भाई की स्त्री, बहिन, पुत्र की स्त्री और कन्या – ये चारों समान हैं। इनको जो कोई बुरी दृष्टि से देखता है, उसे मारने में कुछ भी पाप नहीं होता। **(कि०का० पृष्ठ संख्या ६७५)**

४. श्री राम चन्द्र जी द्वारा वानर सेना सहित समुद्र के पार आने पर रावण द्वारा सभासदों से परामर्श करने पर मन्त्रियों द्वारा भयवश उचित सलाहं न दिये जाने पर नीति वचन।

- **सचिव बैद गुरु तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस।**
  राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगही नास।।

मन्त्री, वैद्य और गुरु – ये तीन यदि (अप्रसन्नता के) भय या (लाभ की) आशा से (हित की बात न कहकर) प्रिय बोलते हैं (ठकुर सोहाती कहने लगते हैं), तो (क्रमशः) राज्य, शरीर और धर्म–इन तीन का शीघ्र ही नाश हो जाता है। **(सु०का० पृष्ठ संख्या ७३२)**

— ● —

(४.३)

१. वानर सेना सहित समुद्र पार करने के लिये जड़ समुद्र द्वारा भगव
श्री रामजी की विनय न मानने पर भगवान श्री राम चन्द्र जी द्वारा
। युक्त होकर श्री लक्ष्मणजी से कहे गये नीति वचन।

- **सठ सन विनय कुटिल सन प्रीती। सहज कृपन सन सुंदर नीत**

मूर्ख से बिनय, कुटिल के साथ प्रीति, स्वभाविक ही कंजूस से सु
नीति। (सु०का० पृष्ठ संख्या ७५०)

- **ममता रत सन ग्यान कहानी। अति लोभी सन बिरति बखानी।**
  क्रोधिहि सम कामिहि हर कथा। ऊसर बीज बएँ फल जथा।

ममता में फंसे हुए मनुष्य से ज्ञान की कथा, अत्यन्त लोभी से वैराग्य
वर्णन, क्रोधी से शम (शान्ति की बात) और कामी से भगवान की क
इनका वैसा ही फल होता है जैसा ऊसर में बीज बोने से होता है। (अ
ऊसर में बीज बोने की भाँति यह सब व्यर्थ जाता है)।

इसी प्रसंग में प्रभु श्रीरामजी काकमुशुण्डिजी के माध्यम से आगे कहते

- **काटेहिं पइ. कदरी फरइ कोटि जतन कोउ सींच।**
  विनय न मान खगेस सुनु डाटेहिं पइ नव नीच।।

काकमुशुण्डि जी कहते हैं: – हे गरुड़जी ! सुनिये, चाहे कोई क
उपाय करके सींचे, पर केला तो काटने पर ही फलता है। इसी प्र
नीच विनय से नहीं मानता, वह डाँटने पर ही झुकता है (रास्ते पर आ
है)। (सु०का० पृष्ठ संख्या ७५१)

२. रावण की सभा में श्रीराम के दूत के रूप में श्री अंगद कहते हैं

- **कौल कामबस कृपनि बिमूढ़ा। अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा।**
  सदा रोगबस संतत क्रोधी। बिष्नु बिमुख श्रुति संत विरोधी।।
  तनु पोषक निदंक अघ खानी। जीवत सव सम चौदह प्रानी।

वाममार्गी, कामी, कंजूस, अत्यन्त मूढ़, अति दरिद्र, बदनाम, बहुत
नित्य का रोगी, निरन्तर क्रोध युक्त रहने वाला, भगवान विष्णु से वि

वेद और संतों का विरोधी, अपने ही शरीर का पोषण करने वाला, परायी निन्दा करने वाला और पाप की खान (महान पापी)– ये चौदह प्राणी जीते ही मुरदे के समान हैं। (लं०का० पृष्ठ संख्या ७८५)

३. काक शरीर के प्रति अपने प्रेम का वर्णन करते हुए काकभुशुण्डिजी गरुड़जी से नीति वचन कहते हैं;

- **पन्नगारि असि नीति श्रुति संमत सज्जन कहहिं।**
अति नीचहु सन प्रीति करिअ जानि निज परम हित।।

हे गरुड़जी ! वेदों में ऐसी नीति है और सज्जन भी कहते हैं कि अपना परम हितजानकर नीच से भी प्रेम करना चाहिये। (उ०का० पृष्ठ संख्या ८९१)

४. युद्ध के दौरान रावण द्वारा दुर्वचन कहने पर श्री रामजी द्वारा बताई गई नीति।

- **जनि जल्पना करि सुजसु नासहि नीति सुनहि करहि क्षमा।**
संसार महँ पूरुष त्रिविध पाटल रसाल पनस समा।।
एक सुमन प्रद एक सुमन फल एक फलहिं केवल लागहीं।
एक कहहिं कहहिं करहिं अपर एक करहिं कहत न बागहीं।।

व्यर्थ बकवास करके अपने सुन्दर यश का नाश न करो। क्षमा करना, तुम्हें नीति सुनाता हूँ, सुनो ! संसार में तीन प्रकार के पुरुष होते हैं – पाटल (गुलाब), आम और कटहल के समान। एक (पाटल) फूल देते हैं, एक (आम) फूल और फल दोनों देते हैं और एक (कटहल) में केवल फल ही लगते हैं। इसी प्रकार (पुरुषों में) एक कहते हैं (करते नहीं), दूसरे कहते हैं और करते भी हैं और एक (तीसरे) केवल करते हैं, पर वाणी से कहते नहीं। (लं०का० पृष्ठ संख्या ८४७)

—●—

गुण–धर्म–कर्तव्य–व्यवहार

इस अध्याय में, देवताओं को भी दुर्लभ, मनुष्य शरीर की महि[illegible] मानस रोग, कलियुग के लक्षण व प्रभाव (गुण), तथा समाज में आ[illegible] व्यवहार व कर्तव्य का वर्णन किया गया है।

— ● —

५.१

मनुष्य शरीर की महिमा

श्री राम कथा के अन्त में काकभुशुण्डिजी, गरुड़ जी द्वारा पूछे गये सात प्रश्नों का उत्तर देते हुए, कहते हैं,

- **नर तन सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाचत तेही।।**
  नरक स्वर्ग अपबर्ग निसेनी। ग्यान बिराग भगति सुभ देनी।।

मनुष्य शरीर के समान कोई शरीर नहीं है। चर–अचर सभी जीव उसकी याचना करते हैं। यह मुनष्य–शरीर नरक, स्वर्ग और मोक्ष की सीढ़ी है तथा कल्याणकारी ज्ञान, वैराग्य और भक्ति को देने वाला है।

- **सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर। होहिं बिषय रत मंद मंद तर।।**
  कांच किरिच बदलें ते लेहीं। कर ते डारि परस मनि देहीं।।

ऐसे मनुष्य–शरीर को धारण (प्राप्त) करके भी जो लोग श्री हरि का भजन नहीं करते और नीच से भी नीच विषयों में अनुरक्त रहते हैं, वे पारसमणि को हाथ से फेंक देते हैं और बदले में कांच के टुकड़े ले लेते हैं।।

— ● —

५.२

मानस रोग

इसी क्रम में श्री गरुड़ जी के अन्य प्रश्नों का उत्तर देते हुए मानस रोग का वर्णन करते हुए श्री काकभुशुण्डिजी कहते हैं,

- **मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला। तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला।**
  काम वात कफ लोभ अपारा। क्रोध पित्त नित छाती जारा।

सब रोगों की जड़ मोह (अज्ञान) है। उन व्याधियों से फिर और बहुत शूल उत्पन्न होते हैं। काम बात है, लोभ अपार (बढ़ा हुआ) कफ है और क्रोध पित्त है जो सदा छाती जलाता रहता है।

- **प्रीति करहिं जौं तीनिउ भाई। उपजइ सन्यपात दुखदाई।।**
  बिषय मनोरथ दुर्गम नाना। ते सब सूल नाम को जाना।।

यदि कही ये तीनों भाई (बात, पित्त और कफ) प्रीति कर लें (मिल जायँ) तो दुःखदायक सन्निपात रोग उत्पन्न होता है। कठिनता से प्राप्त (पूर्ण) होने वाले जो विषयों के मनोरथ हैं, वे ही सब शूल (कष्टदायक) रोग हैं; उनके नाम कौन जानता है (अर्थात् वे अपार हैं)।।

- **ममता दादु कंडु इरषाई। हरष विषाद गरह बहुताई।।**
  पर सुख देखि जरन सोई छई। कुष्ट दुष्टता मन कुटिलई।।

ममता दाद है, ईष्या (डाह) खुजली है, हर्ष–विषाद गले के रोगों की अधिकता है, पराये सुख को देखकर जो जलन होती है, वही क्षयी है; दुष्टता और मन की कुटिलता ही कोढ़ है।।

- **अहंकार अति दुखद डमरुआ। दंभ कपट मद मान नेहरुआ।।**
  तृस्ना उदरवृद्धि अति भारी। त्रिबिध ईषना तरुन तिजारी।।

अहंकार अत्यन्त दुख देने वाला डमरू (गांठ का) रोग है। दम्भ, कपट, मद और मान नहरुआ (नसों का) रोग है। तृष्णा बड़ा भारी उदरवृद्धि (जलोदर) रोग है। तीन प्रकार (पुत्र, धन और मान) की प्रबल इच्छाएँ प्रबल तिजारी हैं।।

- **जुग विधि ज्वर मत्सर अबिबेका। कहँ लग कहौं कुरोग अनेका।**

मत्सर और अविवेक दो प्रकार के ज्वर हैं। इस प्रकार के अनेकों बुरे रोगों का कहाँ तक वर्णन किया जाय।।

- **एक ब्याधि बस नर मरहिं ए असाधि बहु व्याधि।**
  पीड़हि संतत जीव कहुँ सो किमि लहै समाधि।।

एक ही रोग के वश होकर मनुष्य मर जाते हैं, फिर ये तो बहुत से असाध्य रोग हैं। ये जीव को निरन्तर कष्ट देते रहते हैं, ऐसी दशा में वह समाधि (शान्ति) को कैसे प्राप्त करे।।

- **नेम धर्म आचार तप ग्यान जग्य जप दान।**
  भेषज पुनि कोटिन्ह नहिं रोग जाहिं हरिजान।।

नियम, धर्म, आचार (उत्तम आचरण) तप, ज्ञान, यग्य, जप, दान तथा और भी करोड़ों औषधियाँ हैं, परन्तु हे गरुडजी ! उनसे ये रोग नहीं जाते।।

- **एहि विधि सकल जीव जग रोगी। सोक हरष भय प्रीति बियोगी।**

इस प्रकार जगत में समस्त जीव रोगी हैं, जो शोक, हर्ष, भय, प्रीति और वियोग के दुःख से और भी दुखी हो रहे हैं।

- **जाने ते छीजहिं कछु पापी। नास न पावहिं जन परितापी।।**
  विषय कुपथ्य पाई अंकुरे। मुनिहु हृदयँ का नर बापुरे।।

प्राणियों को जलाने वाले ये पापी (रोग) जान लेने पर कुछ क्षीण अवश्य हो जाते हैं। परन्तु नाश को प्राप्त नहीं होते। विषय रूपी कुपथ्य पाकर ये मुनियों के हृदय में भी अंकुरित हो उठते हैं, तब बेचारे साधारण मुनष्य तो क्या चीज हैं।

- **राम कृपाँ नासहिं सब रोगा। जौं एहि भाँति बनै संजोगा।।**
  सदगुर बैद बचन बिस्वासा। संजम यह न बिषय कै आसा।।

यदि श्रीरामजी की कृपा से इस प्रकार का संयोग बन जाय तो यह सब रोग नष्ट हो जायँ। सदगुरु रूपी वैद्य के वचन में विश्वास हो। विषयों की आशा न करे, यही संयम (परहेज) हो

- **रघुपति भगति सजीवन मूरी। अनूपान श्रद्धा मति पूरी।।**
  एहि बिधि भलेहिं सो रोग नसाहीं। नाहिं त जतन कोटि नहिं जाहीं।।

श्री रघुनाथजी की भक्ति संज्जीवनी जड़ी है। श्रद्धा से पूर्ण बुद्धि ही अनुपान (दवा के साथ लिया जाने वाला मधु आदि) है।

इस प्रकार का संयोग हो तो वे रोग भले ही नष्ट हो जाये, नहीं तो करोड़ों प्रयत्नों से भी नहीं जाते।

- **जानिअ तब मन विरुज गोसाँई। जब उर बल बिराग अधिकाई।।**
  सुमति छुधा बाढ़इ नित नई। विषय आस दुर्बलता गई।।

हे गोसाईं ! मन को निरोग हुआ तब जानना चाहिये, जब हृदय में वैराग्य का बल बढ़ जाय, उत्तम बुद्धिरूपी भूख नित नयी बढ़ती रहे और विषयों की आशारूपी दुर्बलता मिट जाय।।

- **बिमल ग्यांन जल जब सो नहाई। तब रह राम भगति उर छाई।।**
  सिव अज सुक सनकादिक नारद। जे मुनि ब्रह्म बिचार बिसारद।।

(इस प्रकार सब रोगों से छूटकर) जब मनुष्य निर्मल ज्ञानरूपी जल में स्नान कर लेता है, तब उसके हृदय में रामभक्ति छा रहती है। शिवजी, ब्रह्माजी, शुकदेवजी, सनकादि और नारद आदि ब्रह्म विचार में परम निपुण जो मुनि हैं;

- **सब कर मत खगनायक एहा। करिअ राम पद पंकज नेहा।।**
  श्रुति पुरान सब ग्रंथ कहाहीं। रघुपति भगति बिना सुख नाहीं।।

हे पक्षिराज ! उन सबका मत यही है कि श्रीरामजी के चरण कमलों में प्रेम करना चाहिये, श्रुति, पुराण और सभी ग्रन्थ कहते हैं कि श्री रघुनाथ जी की भक्ति के बिना सुख नहीं है।

मानस रोगों से मुक्ति का मार्ग बताते हुए श्री काकभुशुण्डिजी आगे कहते हैं

- **साधक सिद्ध बिमुक्त उदासी। कबि कोबिद कृतग्य सन्यासी।।**
  जोगी सूर सुतापस ग्यानी। धर्म निरत पंडित बिग्यानी।।

साधक, सिद्ध, जीवन्मुक्त, उदासी (विरक्त), कवि, विद्वान, कर्म (रहस्य) के ज्ञाता, संन्यासी, योगी, शूरवीर, बड़े तपस्वी, ज्ञानी, धर्मपरायण, पण्डित और विज्ञानी;

- **तरहिं न बिनु सेएँ मम स्वामी। राम नमामि नमामि नमामी।।**
  सरन गएँ मो से अघ रासी। होहिं सुद्ध नमामि अबिनासी।।

ये कोई भी मेरे स्वामी श्रीरामजी का सेवन (भजन) किये बिना नहीं तर सकते। मैं उन्हीं श्रीरामजी को बार–बार नमस्कार करता हूँ। जिनकी शरण जाने पर मुझ (चन्द्र कुमार) जैसे पाप राशि भी शुद्ध (पाप रहित) हो जाते हैं, उन अविनाशी श्रीरामजी को मैं नमस्कार करता हूँ।

— ● —

५.३

कलयुग के लक्षण (गुण)

पक्षिराज गरुणजी से कलियुग के लक्षणों का वर्णन करते हुए काकभुशुण्डिजी कहते हैं;

- **कलिमल ग्रसे धर्म सब लुप्त भए सदग्रंथ।।**
  दंभिन्ह निज मति कल्पि करि प्रगट किए बहु पंथ।।

कलियुग के पापों ने सब धर्मों को ग्रस लिया, सदग्रन्थ लुप्त हो गये, दम्भियों ने अपनी बुद्धि से कल्पना कर–कर के बहुत–से पंथ प्रकट कर दिये।।

- **भए लोग सब मोहबस लोभ ग्रसे सुभ कर्म।**
  सुनु हरिजान ग्यान निधि कहउँ कछुक कलिधर्म।।

सभी लोग मोह के वश हो गये, शुभकर्मों को लोभ ने हड़प लिया। हे ज्ञान के भण्डार ! हे श्री हरिके वाहन ! सुनिये, अब मैं कलियुग के कुछ धर्म (लक्षण) कहता हूँ।

- **बरन धर्म नहिं आश्रम चारी। श्रुति बिरोध रत सब नर नारी।।**
  द्विज श्रुति बेचक भूप प्रजासन। कोउ नहिं मान निगम अनुसासन।।

कलियुग में न वर्ण धर्म रहता है, न चारों आश्रम रहते हैं। सब पुरुष–स्त्री वेद के विरोध में लगे रहते हैं। ब्राह्मण वेदों के बेचने वाले और राजा प्रजा को खा डालने वाले होते हैं। वेद की आज्ञा कोई नहीं मानता।

- **मारग सोइ जा कहुँ जोइ भावा। पंडित सोइ जो गाल बजावा।।**
  मिथ्यारंभ दंभरत जोइ। ता कहुँ संत कहइ सब कोई।।

जिसको जो अच्छा लग जाय, वही मार्ग है। जो डींग मारता है, वही पण्डित है। जो मिथ्या आरम्भ (आडम्बर रचता) करता है और जो दम्भ में रत है, उसी को सब काई संत कहते हैं।

- **सोई सयान जो परधन हारी। जो कर दंभ सो बड़ आचारी।।**
  जो कह झूँठ मसखरी जाना। कलिजुग सोइ गुनवंत बखाना।।

जो (जिस किसी प्रकार से) दूसरे का धन हरण कर ले, वही बुद्धिमान है। जो दम्भ करता है, वही बड़ा आचारी है। जो झूठ बोलता है और हँसी–दिल्लगी करना जानता है, कलियुग में वही गुणवान कहा जाता है।

- **निराचार जो श्रुति पथ त्यागी। कलिजुग सोइ ग्यानी सो बिरागी।।**
  जाकें नख अरु जटा बिसाला। सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला।।

जो आचारहीन है और बेदमार्ग को छोड़े हुए है, कलियुग में वही ग्यानी और वही वैराग्यवान है। जिसके बड़े–बड़े नख और लम्बी–लम्बी जटाएँ हैं, वही कलियुग में प्रसिद्ध तपस्वी है।

- **असुभ वेष भूषन धरे भच्छाभच्छ जे खाहिं।**
  तेइ जोगी तेइ सिद्ध नर पूज्य ते कलिजुग माहिं।।

जो अमंगल वेष और अमंगल भूषण धारण करते हैं और भक्ष्य–अभक्ष्य (खाने योग्य और न खाने योग्य) सब कुछ खा लेते हैं, वे ही योगी हैं, वे ही सिद्ध हैं और वे ही मनुष्य कलियुग में पूज्य हैं।

- **जे अपकारी चार तिन्ह कर गौरव मान्य तेइ।**
  मन क्रम बचन लबार तेइ बकता कलिकाल महुँ।।

जिनके आचरण दूसरों का अपकार (अहित) करने वाले हैं, उन्हीं का बड़ा गौरव होता है, और वे ही सम्मान के योग्य होते हैं। जो मन, वचन और कर्म से (लबार) झूठ बोलने वाले हैं, वे ही कलियुग में वक्ता माने जाते हैं।

- **नारि बिबस नर सकल गोसाईं। नाचहिं नट मर्कट की नाईं।।**
  सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ग्याना। मेलि जनेऊ लेहि कुदाना।।

हे गोसाईं ! सभी मनुष्य स्त्रियों के विशेष वश में हैं और बाजीगर के बंदर की तरह (उनके नचाये) नाचते हैं। ब्राह्मणों को शूद्र ज्ञानोपदेश करते हैं और गले में जनेऊ डालकर कुत्सित दान लेते हैं।

- **सब नर काम लोभ रत क्रोधी। देव विप्र श्रुति संत बिरोधी।।**
  गुन मंदिर सुंदर पति त्यागी। भजहिं नारि पर पुरुष अभागी।।

सभी पुरुष काम और लोभ में तत्पर और क्रोधी होते हैं। देवता, ब्राह्मण, वेद और संतों के विरोधी होते हैं। अभागिनी स्त्रियाँ गुणों के धाम सुन्दर पति को छोड़कर पर पुरुष का सेवन करती हैं।

- **सौभागिनी बिभूषण हीना। बिधवन्ह के सिंगार नबीना।।**
  गुर सिष बधिर अंध का लेखा। एक न सुनइ एक नहिं देखा।।

सुहागिनी स्त्रियाँ तो आभूषणों से रहित होती हैं, पर विधवाओं के नित्य नये श्रृंगार होते हैं। शिष्य और गुरु में बहरे और अंधे का–सा हिसाब होता है। एक (शिष्य) गुरु के उपदेश को सुनता नहीं, एक (गुरु) देखता नहीं (उसे ज्ञान दृष्टि प्राप्त नहीं है)।

- **हरइ सिष्य धन सोक न हरई। सो गुर घोर नरक महुँ परई।।**
  मातु पिता बालकन्हि बोलावहिं। उदर भरै सोइ धर्म सिखावहिं।।

जो गुरु शिष्य का धन हरण करता है, पर शोक हरण नहीं करता, वह घोर नरक में पड़ता है। माता–पिता बालकों को बुलाकर वही धर्म सिखलाते हैं, जिससे पेट भरे।

- **बादहि सूद्र द्विजन्ह सन हम तुम्ह ते कछु घाटि।**
  जानइ ब्रह्म सो बिप्रबर आँखि देखावहिं डाटि।।

शूद्र ब्राह्मणों से विवाद करते हैं (और कहते हैं) कि हम क्या तुमसे कुछ कम हैं? जो ब्रह्म को जानता है वही श्रेष्ठ ब्राह्मण है। (ऐसा कहकर) वे उन्हें डाँटकर आँखें दिखलाते हैं।

- **पर त्रिय लंपट कपट सयाने। मोह द्रोह ममता लपटाने।।**
  तेइ अभेदबादी ग्यानी नर। देखा मैं चरित्र कलियुग कर।।

जो परायी स्त्री में आसक्त, कपट करने में चतुर और मोह, द्रोह और ममता में लिपटे हुए हैं, वे ही मनुष्य अभेदवादी (ब्रह्म और जीव को एक बताने वाले) ज्ञानी हैं। मैंने उस कलियुग का यह चरित्र देखा।

- **जे बरनाधम तेलि कुम्हारा। स्वपच किरात कोल कलवारा।।**
  नारि मुई गृह संपति नासी। मूड़ मुड़ाइ होहि संन्यासी।।

तेली, कुम्हार, चाण्डाल, भील, कोल और कलवार आदि जो वर्ण में नीचे हैं, स्त्री के मरने पर अथवा घर की सम्पत्ति नष्ट हो जाने पर सिर मुँड़ाकर संन्यासी हो जाते हैं।

- ते विप्रन्ह सन आपु पुजावहिं। उभय लोक निज हाथ नसावहिं।
  बिप्र निरच्छर लोलुप कामी। निराचार सठ वृषली स्वामी।

वे अपने को ब्राह्मणों से पुजवाते हैं और अपने ही हाथों दोनों लोक नष्ट करते हैं। ब्राह्मण अनपढ़, लोभी, कामी, आचारहीन, मूर्ख और नीची जाति की व्यभिचारिणी स्त्रियों के स्वामी होते हैं।

- सूद्र करहिं जप तप ब्रत नाना। बैठि बरासन कहहिं पुराना।।
  सब नर कल्पित करहिं अचारा। जाइ न बरनि अनीति अपारा।।

शूद्र नाना प्रकार के जप, तप और ब्रत करते हैं तथा ऊँचे आसन (व्यासगद्दी) पर बैठकर पुराण कहते हैं। सब मनुष्य मनमाना आचरण करते हैं। अपार अनीति का वर्णन नहीं किया जा सकता।।

- भए बरन संकर कलि भिन्नसेतु सब लोग।
  करहिं पाप पावहिं दुख भय रूज सोक बियोग।।

कलियुग में सब लोग वर्णसंकर और मार्यादा से च्युत हो गये। वे पाप करते हैं और (उनके फलस्वरूप) दुःख, भय, रोग, शोक और (प्रिय वस्तु का) वियोग पाते हैं।

- श्रुति संमत हरि भक्ति पथ संजुत बिरति बिबेक।
  तेहिं न चलहिं नर मोह बस कल्पहिं पंथ अनेक।।

वेदसम्मत तथा वैराग्य और ज्ञान से युक्त जो हरि भक्ति का मार्ग है मोहवश मनुष्य उस पर नहीं चलते और अनेक नये–नये पंथों की कल्पना करते हैं।

- बहु दाम सँवारहिं धाम जती। विषया हरि लीन्हि न रहि बिरती।
  तपसी धनवंत दरिद्र ग्रही। कलि कौतुक तात न जात कही।।

संन्यासी बहुत धन लगाकर घर सजाते हैं। उनमें वैराग्य नहीं रहा, उसे विषयों ने हर लिया। तपस्वी धनवान् हो गये और गृहस्थ दरिद्र हे तात! कलियुग की लीला कुछ कही नहीं जाती।

- **कुलवंति निकारहिं नारि सती। गृह आनहिं चेरि निबेरि गती।।**
  सुत मानहिं मातु पिता तब लौं। अबलानन दीख नहीं जब लौं।।

कुलवती और सती स्त्री को पुरुष घर से निकाल देते हैं और अच्छी चाल को छोड़कर घर में दासी को ला रखते हैं। पुत्र अपने माता–पिता को तभी तक मानते हैं जब तक स्त्री (पत्नी) का मुँह नहीं दिखायी पड़ा।

- **ससुरारि पिआरि लगी जब तें। रिपुरूप कुटुंब भए तब तें।।**
  नृप पाप परायन धर्म नहीं। करि दंड बिडंब प्रजा नितहीं।।

जबसे ससुराल प्यारी लगने लगी, तब से कुटुम्बी शत्रुरूप हो गये। राजा लोग पाप परायण हो गये, उनमें धर्म नहीं रहा। वे प्रजा को नित्य ही (बिना अपराध) दण्ड देकर उसकी विडम्बना (दुर्दशा) किया करते हैं।

- **धनवंत कुलीन मलीन अपी। द्विज चिन्ह जनेउ उधार तपी।।**
  नहिं मान पुरान न बेदहि जो। हरि सेवक संत सही कलि सो।।

धनी लोग नीच जाति के होने पर भी कुलीन माने जाते हैं। द्विज का चिन्ह जनेऊ मात्र रह गया है और नंगे बदन रहना तपस्वी का। जो वेदों और पुराणों को नहीं मानते, कलियुग में वें ही हरिभक्त और सच्चे संत कहलाते हैं।

- **नर पीड़ित रोग न भोग कहीं। अभिमान बिरोध अकारन ही।।**
  लघु जीवन संबतु पंच दसा। कलपांत न नास गुमानु असा।।

मनुष्य रोगों से पीड़ित है, भोग (सुख) कहीं नहीं है। बिना ही कारण अभिमान और विरोध करते हैं। दस–पाँच वर्ष का थोड़ा सा जीवन है, परन्तु घमंड ऐसा है मानो कल्पांत (प्रलय) होने पर भी उनका नाश नहीं होगा।

- **कलिकाल बिहाल किए मनुजा। नहि मानत क्वौ अनुजा तनुजा।।**
  नहिं तोष बिचार न सीतलता। सब जाति कुजाति भए मंगता।।

कलिकाल ने मनुष्य को बेहाल कर डाला। कोइ बहिन–बेटी का भी विचार नहीं करता। (लोगों में) न सन्तोष है, न विवेक और न शीतलता है। जाति, कुजाति सभी लोग भीख माँगने वाले हो गये।

- **इरिषा परुषाच्छर लोलुपता। भर पूरि रही समता बिगता।।**
  सब लोग बियोग बिसोक हए। बरनाश्रम धर्म अचार गए।।

ईष्या (डाह) कडुवे वचन और लालच भरपूर हो रहे हैं, समता चली गयी सब लोग वियोग और विशेष शोक से मरे पड़े हैं। वरणाश्रम–धर्म के आचरण नष्ट हो गये।

- **दम दान दया नहि जानपनी। जड़ता परवंचन ताति धनी।।**
  तनु पोषक नारि नरा सगरें। परनिंदक जे जग सो बगरे।।

इन्द्रियों का दमन, दान, दया और समझदारी किसी में नहीं रही। मूर्खता और दूसरों को ठगना, यह बहुत अधिक बढ़ गया। स्त्री–पुरुष सभी शरीर के ही पालन–पोषण में लगे रहते हैं। जो परायी निन्दा करने वाले हैं जगत में वे ही फैले हैं।

- **सुनु ब्यालारि काल कलि मल अवगुन आगार।**
  गुनउ बहुत कलिजुग कर बिनु प्रयास निस्तार।।

हे सर्पों के शत्रु गरुड़जी ! सुनिये, कलिकाल पाप और अवगुणों का घर है। किन्तु कलियुग में एक गुण भी बड़ा है कि उसमें बिना ही परिश्रम भव बन्धन से छुटकारा मिल जाता है।

- **कृतजुग त्रेता द्वापर पूजा मख अरु जोग।**
  जो गति होइ सो कलि हरि नाम ते पावहिं लोग।।

सत्ययुग, त्रेता और द्वापर में जो गति पूजा, यज्ञ और योग से प्राप्त होती है, वही गति कलियुग में लोग केवल भगवान् (श्रीराम) के नाम से पा जाते हैं।।

- **कलिजुग सम जुग आन नहिं जौं नर कर विस्वास।**
  गाइ राम गुन गन बिमल भव तर बिनहिं प्रयास।।

यदि मनुष्य विश्वास करे, तो कलियुग के समान दूसरा युग नहीं है (क्योंकि) इस युग में श्रीरामजी के निर्मल गुण समूहों को गा–गाकर मनुष्य बिना ही परिश्रम संसार (रूपी समुद्र) से तर जाता है।

— ● —

५.४

धर्म एवं कर्तव्य

इस अध्याय में श्री राम चरित मानस के भिन्न–भिन्न स्थानों/प्रसंगों में उल्लिखित विभिन्न धर्म/कर्तव्यों (जैसे स्त्री / पत्नी धर्म, पुत्र धर्म, मित्र का मित्र के प्रति, राजा का प्रजा के प्रति, सेवक का स्वामी के प्रति, गुरु का शिष्य के प्रति तथा शिष्य का गुरु के प्रति, धर्म व कर्तव्यों) का वर्णन किया गया है। सन्दर्भ व प्रसंग यथावत दिये गये हैं:–

वन गमन से पूर्व श्रीराम द्वारा श्री सीताजी को धर्मोपदेश तथा श्री सीताजी द्वारा **पत्नी का पति के प्रति धर्म व कर्तव्य** बताना।

पत्नी धर्म (अयो०का० पृष्ठ संख्या ३७८–३८१)

- **आपन मोर नीक जो चहहू। वचन हमार मानि गृह रहहू।।**
  आयसु मोर सासु सेवकाई। सब बिधि भामिनि भवन भलाई।।

श्री सीताजी द्वारा वन में साथ जाने की इच्छा व्यक्त करने पर श्रीरामजी कहते हैं, जो अपना और मेरा भला चाहती हो, तो मेरा वचन मानकर घर रहो। हे भामिनी ! मेरी आज्ञा का पालन होगा, सास की सेवा बन पड़ेगी। घर रहने में सभी प्रकार से भलाई है।

- **एहि से अधिक धरम नहिं दूजा। सादर सासु ससुर पद पूजा।।**

आदरपूर्वक सास–ससुर के चरणों की पूजा (सेवा) करने से बढ़कर दूसरा कोई धर्म नहीं है।

- **गुरु श्रुति संमत धरम फलु पाइअ विनहिं कलेस।।**

(मेरी आज्ञा मानकर घर रहने से) गुरु और वेद के द्वारा सम्मत धर्म (के आचरण) का फल तुम्हें बिना ही क्लेश के मिल जाता है।

प्रभु श्री राम की सीख (उपदेश) सुनकर पति बियोग के विषय में माता सीताजी बोलीं :–

- **मैं पुनि समुझि दीख मन माही। पिय बियोग सम दुखु जग नाहीं।**

मैने मन में समझकर देख लिया कि पति के वियोग के समान जगत में कोई दुखः नहीं है।

- **प्रान नाथ करुनायतन सुंदर सुखद सुजान।।**
  तुम्ह बिनु रघुकुल कुमुद बिधु सुरपुर नरक समान।।

हे प्राणनाथ ! हे दया के धाम। हे सुन्दर ! हे सुखों के देने वाले ! हे सुजान ! हे रघुकुल रूपी कुमुद के खिलाने वाले चन्द्रमा ! आपके बिना स्वर्ग भी मेरे लिये नरक के समान है।

- **मातु पिता भगिनी प्रिय भाई। पिय परिवारू सुहृद समुदाई।।**
  सासु ससुर गुर सजन सहाई। सुत सुंदर सुसील सुखदाई।।

माता, पिता, बहन, प्यारा परिवार, मित्रों का समुदाय, सास, ससुर, गुरु, स्वजन (बन्धु–बान्धव), सहायक और सुन्दर सुशील और सुख देने वाले पुत्र–

- **जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते। पिय बिनु तियहि तरनिहु ते ताते।**
  तनु धनु धाम धरनि पुर राजू। पति बिहीन सबु सोक समाजू।

हे नाथ। जहां तक स्नेह और नाते हैं, पति के बिना स्त्री को सभी सूर्य से भी बढ़कर तपाने वाले हैं। शरीर, धन, घर, पृथ्वी, नगर और राज्य, पति के बिना यह सब शोक का समाज है।

- **भोग रोग सम भूषन भारू। जम जातना सरिस संसारू।**
  प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माही। मो कहुँ सुखद कतहुँ कछु नाहीं।

भोग रोग के समान है, गहने भार रूप है और संसार यम–यातना (नरक की पीड़ा) के समान है। हे प्राणनाथ। आपके बिना जगत में मुझे कहीं कुछ भी सुखदायी नहीं है।

- **जिय बिनु देह नदी बिनु बारी। तैसिअ नाथ पुरूष बिनु नारी।।**

जैसे बिना जीव के देह (शरीर) और बिना जल के नदी, वैसे ही हे नाथ ! बिना पुरुष के स्त्री है।।

श्री भरतजी द्वारा चित्रकूट से लौटने के पूर्व श्रीराम से, अयोध्या नरेश श्री दशरथजी की आज्ञानुसार अवधि भर (१४ वर्ष तक) अवध का सेवा (राज्य) करने हेतु शिक्षा (उपदेश) देने हेतु कहने पर भगवान श्रीराम द्वारा **पुत्र धर्म** व राजा के कर्तव्य के विषय में बतायी गई शिक्षा।

पुत्र धर्म (अयो०का० पृष्ठ संख्या ५६१)

- **मोर तुम्हार परम पुरुषारथु। स्वारथु सुजसु धरमु परमारथु।।**
पितु आयसु पालिहिं दुहु भाई। लोक बेद भल भूप भलाई।।

मेरा और तुम्हारा तो परम पुरुषार्थ, स्वार्थ, सुयश, धर्म और परमार्थ इसी में है कि हम दोनों भाई पिताजी की आज्ञा का पालन करें। राजा की भलाई (पिता के वचन का पालन) से ही लोक और वेद दोनों में भला है।

- **गुरु पितु मातु स्वामि सिख पालें। चलेहुँ कुमग पग परहि न खालें।।**
अस बिचारि सब सोच बिहाई। पालहु अवध अवधि भर जाई।।

गुरु, पिता, माता और स्वामी की शिक्षा (आज्ञा) का पालन करने से कुमार्ग पर भी चलने पर पैर गड्ढे में नहीं पड़ता (पतन नहीं होता)। ऐसा बिचारि कर सब सोच छोड़कर अवध जाकर अवधि भर उसका पालन करो।

इसी प्रसंग में आगे श्रीराम जी, राजा की तुलना मुख से करते हुए, **राज धर्म** की शिक्षा देते हुए भरतजी से कहते हैं। (अयो०का० पृष्ठ संख्या ५६२)

- **मुखिआ मुखु सो चाहिये खान पान कहुँ एक।**
पालइ पोषइ सकल अँग तुलसी सहित बिबेक।।

श्री रामजी ने कहा– मुखिया (राजा) को मुख के समान होना चाहिये, जो खाने–पीने को तो एक (अकेला) है, परन्तु विवेकपूर्वक सब अंगों का पालन–पोषण करता है।

वनवास के दौरान चित्रकूट से आगे अत्रिमुनि के आश्रम में पधारने पर अत्रिजी की पत्नी अनसूया जी द्वारा, श्री सीताजी के बहाने, बताये गये।

पतिव्रत स्त्री के धर्म एवं लक्षण (अर०का० पृष्ठ संख्या ६०६–६१०)

- **मातु पिता भ्राता हितकारी। मितप्रद सब सुनु राजकुमारी।।**
अमित दानि भर्ता बयदेही। अधम सो नारि जो सेव न ते ही।।

हे राजकुमारी ! सुनिये माता, पिता, भाई सभी हित क़रने वाले हैं,परन्तु ये सब एक सीमा तक ही (सुख) देने वाले हैं। परन्तु हे जानकी ! पति तो (मोक्षरूप) असीम (सुख) देने वाला है। वह स्त्री अधम है, जो ऐसे पति की सेवा नहीं करती।

- **धीरज धर्म मित्र अरू नारी। आपद काल परिखिअहिं चारी।।**
बृद्ध रोगबस जड़ धनहीना। अंध बधिर क्रोधी अति दीना।।

धैर्य, धर्म, मित्र और स्त्री—इन चारों की विपत्ति के समय ही परीक्षा होती है। वृद्ध, रोगी, मूर्ख, निर्धन, अंधा, बहरा, क्रोधी और अत्यन्त ही दीन।

- **ऐसेहु पति कर किएँ अपमाना। नारि पाव जमपुर दुख नाना।।**
  एकइ धर्म एक ब्रत नेमा। कायँ बचन मन पति पद प्रेमा।।

ऐसे भी पति का अपमान करने से स्त्री यमपुर में भाँति—भाँति के दुःख पाती है। शरीर, वचन और मन से पति के चरणों में प्रेम करना स्त्री के लिये, बस यह एक ही धर्म है, एक ही व्रत है और एक ही नियम है।

- **जग पतिब्रता चारि बिधि अहहीं। बेद पुरान संत सब कहहीं।।**
  उत्तम के अस बस मन माहीं। सपनेहुँ आन पुरुष जग नाहीं।।

जगत में चार प्रकार की पतिव्रताएँ हैं। वेद, पुराण और संत सब ऐसा कहते हैं कि उत्तम श्रेणी की पतिव्रता के मन में ऐसा भाव बसा रहता है कि जगत में (मेरे पति को छोड़कर) दूसरा पुरुष स्वप्न में भी नहीं है।

- **मध्यम परपति देखइ कैसें। भ्राता पिता पुत्र निज जैसें।**
  धर्म बिचारि समुझि कुल रहई। सो निकिृषट त्रिय श्रुति अस कहई।

मध्यम श्रेणी की पतिव्रता पराये पति को कैसे देखती है, जैसे वह अपना सगा भाई, पिता या पुत्र हो (अर्थात् समान अवस्था वाले को वह भाई के रूप में देखती है, बड़े को पिता रूप में और छोटे को पुत्र के रूप में देखती है) जो धर्म को विचार कर और अपने कुल की मर्यादा समझकर बची रहती है, वह निकृष्ट (निम्न श्रेणी की) स्त्री है, ऐसा वेद कहते हैं।

- **बिनु अवसर भय तें रह जोई। जानेहु अधम नारि जगसोई।।**
  पति बंचक परपति रत करई। रौरव नरक कल्प सत परई।।

और जो स्त्री मौका न मिलने से या भयवश पतिव्रता बनी रहती है, जगत में उसे अधम स्त्री जानना। पति को धोखा देने वाली जो स्त्री पराये पति से रति करती है, वह तो सौ कल्पतक रौरव नरक में पड़ी रहती है।

- **छन सुख लागि जनम सत कोटी। दुख न समुझ तेहि सम को खोटी।**
  बिनु श्रम नारि परम गति लहई। पतिब्रत धर्म छाड़ि छल गहई।

क्षण भर के सुख के लिये जो सौ करोड़ (असंख्य) जन्मों के दुःख को नहीं समझती, उसके समान दुष्टा कौन होगी। जो स्त्री छल छोड़कर पतिव्रत धर्म को ग्रहण करती है, वह बिना ही परिश्रम परम गति को प्राप्त करती है।

- **पति प्रतिकूल जनम जहँ जाई। बिधवा होइ पाइ तरुनाई।।**

किन्तु जो पति के प्रतिकूल चलती है, वह जहाँ भी जाकर जन्म लेती है, वहीं जवानी पाकर (भरी जवानी में) विधवा हो जाती है।

किष्किन्धाकाण्ड में सुग्रीव द्वारा बालि के साथ शत्रुता के विषय में सुनकर श्री राम द्वारा **सच्चे मित्र के गुणों/लक्षणों का वर्णन** निम्न प्रकार से किया गया है।

श्रेष्ठ मित्र के गुण एवं लक्षण (कि०का० पृष्ठ संख्या ६७१–६७२)

- **जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहि बिलोकत पातक भारी।।**
  निज दुख गिरि सम रज कर जाना। मित्रक दुख रज मेरू समाना।।

जो लोग मित्र के दुःख से दुखी नहीं होते, उन्हें देखने से ही बड़ा पाप लगता है। अपने पर्वत के समान दुःख को धूल के समान और मित्र के धूल के समान दुःख को सुमेरु (बड़े भारी पर्वत) के समान जाने।

- **जिन्ह के असि मति सहज न आई। ते सठ कत हठि करत मिताई।।**
  कुपथ निवारि सुपंथ चलावा। गुन प्रगटै अवगुनन्हि दुरावा।।

जिन्हें स्वभाव से ही ऐसी बुद्धि प्राप्त नहीं है, वे मूर्ख हठ करके क्यों किसी से मित्रता करते हैं। मित्र का धर्म है कि वह मित्र को बुरे मार्ग से रोककर अच्छे मार्ग पर चलावे।

- **देत लेत मन संक न धरई। बल अनुमान सदा हित करई।।**
  बिपति काल कर सत गुन नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुन एहा।।

देने लेने में मन में शंका न रक्खे। अपने बल के अनुसार सदा हित ही करता रहे। विपत्ति के समय में तो सदा सौगुना स्नेह करे। वेद कहते हैं कि संत (श्रेष्ठ) मित्र के गुण (लक्षण) ये हैं।

- **आगे कह मृदु बचन बनाई। पाछें अनहित मन कुटिलाई।।**
  जाकर चित अहि गति समभाई। असि कुमित्र परिहरेहिं भलाई।।

जो सामने तो बना–बनाकर कोमल वचन कहता है और पीठ–पीछे बुराई करता है तथा मन में कुटिलता रखता है– हे भाई ! (इस तरह) जिसका मन साँप की चाल के समान टेढ़ा है, ऐसे कुमित्र को तो त्यागने में ही भलाई है।

— ● —

अध्याय – ६

जीवन उपयोगी बातें

इस अध्याय में दिन–प्रतिदिन के उपयोग में आने वाली आवश्यक जानकारी एवं महत्वपूर्ण लाभप्रद बातें यथा कीर्ति, कविता और सम्पत्ति की सार्थकता, ईश्वरीय गुण, सोच करने योग्य व्यक्ति, काम, क्रोध, लोभ, मद और माया का प्रभाव, स्वामी, सूर्य और अग्नि के सेवन में सावधानी, सहोदर (छोटा भाई) का महत्व, विषयों के सेवन में सावधानी, दुष्ट तथा परद्रोह में लगे व्यक्तियों का परिणाम, श्री सीतारामजी के रहने योग्य स्थान तथा पक्षीराज गरुड़ द्वारा श्री काकभुशुण्डिजी से पूछे गये, मनुष्य शरीर की महिमा, मानस रोग, भक्ति एवं ज्ञान, पाप–पुण्य, सुख–दुःख आदि के विषय में ७ प्रश्न व उनके उत्तरों का संकलन किया गया है।

— ● —

६.१

जानने व करने योग्य कुछ महत्वपूर्ण बातें

चार प्रकार के जीव

- **आकर चारि लाख चौरासी। जाति जीव जल थल नभ बासी।।**
  सीय राममय सब जग ज्ञानी। करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

चौरासी लाख योनियों में चार प्रकार के **(स्वेदज, अण्डज, उद्भिज, जरायुज)** जीव जल, पृथ्वी और आकाश में रहते हैं, उन सबसे भरे हुए इस जगत को श्री सीताराम मय जानकर मैं दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ। (बा०का० पृष्ठ संख्या १२)

कीर्ति, कविता और सम्पत्ति की सार्थकता

- **कीरति, भनिति भूति भलि सोई। सुरसर सम सब कहँ हित होई।**

कीर्ति, कविता और सम्पत्ति वही उत्तम है जो गंगाजी की तरह सबका हित करने वाली हो। (बा०का० पृष्ठ संख्या १६–२०)

दम, यम, नियम

(बा०का० पृष्ठ संख्या ४४)

- **दम का अर्थ है – इन्द्रिय निग्रह**
- **यम का अर्थ (अंग है) – अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह**
- **नियम का अर्थ (अंग है) – शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान**

ईश्वरीय गुण

सम्पूर्ण ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्यरूप

यह छः ईश्वरीय गुण हैं – इन गुणों से युक्त केवल भगवान हैं। (बा०का० पृष्ठ संख्या ८५)

सोच करने योग्य व्यक्ति

(अयो०का० पृष्ठ संख्या ४७०–४७१)

दशरथजी की मृत्यु पर शोकग्रस्त श्री भरतजी को (दशरथजी के लिये सोच न करने का) उपदेश करते हुए कुल गुरु वशिष्ठ मुनि कहते हैं :–

- **सोचिअ बिप्र जो बेद बिहीना। तजि निज धरमु बिषय लयलीना।।**
  सोचिउ नृपति जो नीति न जाना। जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना।।

सोच उस ब्राह्मण का करना चाहिये जो वेद नहीं जानता और जो अपना धर्म छोड़कर विषय भोग में ही लीन रहता है। उस राजा का सोच करना चाहिये जो नीति नहीं जानता और जिसको प्रजा प्राणों के समान प्यारी नहीं है।

- **सोचिअ बयसु कृपन धनवानू। जो न अतिथि सिव भगति सुजानू।।**
  सोचिअ सूद्र बिप्र अवमानी। मुखर मानप्रिय ग्यान गुमानी।।

उस वैश्य का सोच करना चाहिये जो धनवान होकर भी कंजूस है, और जो अतिथि सत्कार तथा शिवजी की भक्ति करने में कुशल नहीं है। उस शूद्र का सोच करना चाहिये जो ब्राह्मणों का अपमान करने वाला, बहुत बोलने वाला, मान–बड़ाई चाहने वाला और ज्ञान का घमंड रखने वाला है।

- **सोचिअ पुनि पति बंचक नारी। कुटिल कलह प्रिय इच्छाचारी।।**
  सोचिअ बटु निज ब्रतु परिहरई। जो नहिं गुर आयसु अनुसरई।।

पुनः उस स्त्री का सोच करना चाहिये जो पति को छलने वाली, कुटिल, कलहप्रिय और स्वेच्छाचारिणी है। उस ब्रह्मचारी का सोच करना चाहिये जो अपने ब्रह्मचर्य–ब्रत को छोड़ देता है और गुरु की आज्ञानुसार नहीं चलता।

- **सोचिअ गृही जो मोह बस करइ करम पथ त्याग।**
  सोचिअ जती प्रपंच रत बिगत बिबेक बिराग।।

उस गृहस्थ का सोच करना चाहिये जो मोह वश कर्म मार्ग का त्याग कर देता है, उस संन्यासी का सोच करना चाहिये जो दुनिया के प्रपंच में फंसा हुआ है और ज्ञान वैराग्य से हीन है।

- **वैरवानस सोइ सोचै जोगू। तपु बिहाइ जेहि भावइ भोगू।।**
  सोचिअ पिसुन अकारन क्रोधी। जननि जनक गुर बंधु बिरोधी।।

वानप्रस्थ वही सोच करने योग्य है जिसको तपस्या छोड़कर भोग अच्छे लगते हैं। सोच उसका करना चाहिये जो चुगलखोर है, बिना ही कारण क्रोध करने वाला है तथा माता, पिता, गुरु एवं भाई–बन्धुओं के साथ विरोध करने वाला है।

- **सब बिधि सोचिअ पर अपकारी। निजतनु पोषक निरदय भारी।।**
  सोचनीय सबहीं बिधि सोई। जो न छाड़ि छलु हरि जन होई।।

सब प्रकार से उसका सोच करना चाहिये जो दूसरों का अनिष्ट करता है, अपने ही शरीर का पोषण करता है और बड़ा भारी निर्दयी है और वह तो सभी प्रकार से सोचनीय है जो छल छोड़कर हरि (श्रीराम) का भक्त नहीं होता।

<u>सेवक, भिखारी, व्यसनी तथा लोभी व्यक्तियों के लिए परामर्श</u>

(अर०का० पृष्ठ संख्या ६२६)

- **सेवक सुख चह मान भिखारी। ब्यसनी धन सुभगति बिभिचारी।।**
  लोभी जसु चह चार गुमानी। नभ दुहि दूध चहत ए प्रानी।।

सेवक सुख चाहे, भिखारी सम्मान चाहे, ब्यसनी (जिसे जुए, शराब आदि का ब्यसन हो) धन और व्यभिचारी शुभगति चाहे, लोभी यश चाहे और

अभिमानी चारों फल–अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष चाहे, तो ये सब प्राणी आकाश को दुहकर दूध लेना चाहते हैं (अर्थात् असम्भव बात को सम्भव करना चाहते हैं)

भावार्थ यह है कि

- सेवक को सुख की कामना नहीं करना चाहिये, उसे (श्री हनुमान जी एवं श्री भरतजी के समान) सदैव स्वामी की सेवा में रत रहना चाहिये।
- भिखारी को कभी भी सम्मान प्राप्त नहीं हो सकता।
- किसी भी प्रकार का ब्यसनी धनवान नहीं बन सकता।
- ब्यभिचारी को शुभगति प्राप्त नहीं हो सकती एवं लोभी को कभी भी यश प्राप्त नहीं हो सकता।

नौ व्यक्ति (जिनसे विरोध नहीं करना चाहिये)
(अर०का० पृष्ठ संख्या ६३८)

- तब मारीच हृदयँ अनुमाना। नवहि विरोधें नहिं कल्याना।।
  सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी। बैद बंदि कबि भानस गुनी।।

तब मारीच ने हृदय में अनुमान किया कि शस्त्री (शस्त्रधारी), मर्मी (भेद जानने वाला), समर्थ स्वामी, मूर्ख, धनवान, वैद्य, भाट, कवि और रसोइया – इन नौ व्यक्तियों से विरोध (वैर) करने में कल्याण (कुशल) नहीं होता।

भावार्थ – शस्त्रधारी, मर्मी (भेद जानने वाला), समर्थ स्वामी, मूर्ख धनवान, वैद्य, भाट, कवि और रसोइया। इन नौ व्यक्तियों से विरोध नहीं करना चाहिये।

श्री सीता हरण के पश्चात् सीताजी की खोज हेतु वन में विचरण करते हुए श्री रामजी द्वारा (लक्ष्मणजी के माध्यम से) दी गई शिक्षा :-
(अर०का० पृष्ठ संख्या ६५३)

• **संग लाइ करिनीं करि लेहीं। मानहुँ मोहि सिखावनु देहीं।।**
सास्त्र सुचिंतित पुनि पुनि देखिअ। भूप सुसेवित बस नहिं लेखिअ।।

हाथी हथिनियों को साथ लगा लेते हैं। वे मानो मुझे शिक्षा देते हैं कि स्त्री (पत्नी) को कभी अकेली नहीं छोड़ना चाहिये, भलीभांति चिन्तन किये हुए शास्त्र को भी बार–बार देखते रहना चाहिये। अच्छी तरह सेवा किये हुए भी राजा को वश में नहीं समझना चाहिये।

• **राखिअ नारि जदपि उर माहीं। जुबती सास्त्र नृपति बस नाहीं।।**

और स्त्री को चाहे हृदय में ही क्यों न रखा जाय; परन्तु युवती स्त्री, शास्त्र और राजा– किसी के वश में नहीं रहते।

काम, क्रोध, लोभ, मद और माया के विषय में प्रभु श्री रामजी आगे लक्ष्मण जी से कहते हैं।
(अर०का० पृष्ठ संख्या ६५५–६५६)

• **तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ।**
मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिष महुँ छोभ।।

हे तात ! काम, क्रोध और लोभ– ये तीन अत्यन्त प्रबल दुष्ट हैं। ये विज्ञान के धाम मुनियों के मनों को भी पल भर में क्षुब्ध कर देते हैं।

• **लोभ के इच्छा दंभ बल काम के केवल नारि।**
क्रोध के परुष बचन बल मुनिबर कहहिं विचार।।

लोभ को इच्छा और दम्भ का बल है, काम को केवल स्त्री का बल है और क्रोध को कठोर वचनों का बल है, श्रेष्ठ मुनि विचार कर ऐसा कहते हैं।

इसी प्रसंग में आगे भगवान शिवजी कहते हैं
(अर०का० पृष्ठ संख्या ६५६)

• **क्रोध मनोज लोभ मद माया। छूटहिं सकल राम की दाया।।**
सो नर इन्द्रजाल नहिं भूला। जा पर होइ सो नट अनुकूला।।

क्रोध, काम, लोभ, मद और माया–ये सभी श्रीरामजी की दया से छूट जाते हैं। वह नट (नटराज भगवान्) जिस पर प्रसन्न होता है, वह मनुष्य इन्द्रजाल (माया) में नहीं भूलता।

- उमा कहउँ मैं अनुभव अपना। सत हरि भजन जगत सब सपना।।

- उमा ! मैं तुम्हें अपना अनुभव कहता हूँ – हरि का भजन ही सत्य है, यह सारा जगत् तो स्वप्न (की भांति झूठा) है।

स्वामी, सूर्य व अग्नि के सेवन में सावधानी

(कि०का० पृष्ठ संख्या ६८७)

- भानु पीठि सेइअ उर आगी। स्वामिहि सर्ब भाव छल त्यागी।।

सूर्य को पीठ से और अग्नि को हृदय से (सामने से) सेवन करना चाहिये। परन्तु स्वामी की सेवा तो छल छोड़कर सर्वभाव से (मन वचन, कर्म से) करनी चाहिये।

भगवान श्री रामचन्द्रजी महाराज द्वारा समुद्र पार कर लंका आ जाने का समाचार सुनकर मन्दोदरी द्वारा रावण को श्री रामजी से विरोध त्यागने का परामर्श देते हुए भगवान के विश्व रूप का वर्णन

(लं०का० पृष्ठ संख्या ७६९–७७०)

- सजल नयन कह जुग कर जोरी। सुनहु प्रानपति बिनती मोरी।।
- कंत राम बिरोध परि हरहु। जानि मनुज जन हठ मन धरहू।।
- बिस्वरूप रघुवंश मनि करहु बचन बिस्वासु।
- लोक कल्पना बेद कर अंग–अंग प्रति जासु।।

नेत्रों में जलभरकर, दोनों हाथ जोड़कर मन्दोदरी रावण से कहती है – हे प्राणनाथ मेरी विनती (सलाह) सुनिये। हे प्रियतम ! श्रीरामजी से विरोध छोड़ दीजिये। उन्हें मनुष्य जानकर मन में हठ न पकड़े रहिये।

मेरे इन वचनों पर विश्वास कीजिये कि वे रघुकुल शिरोमणि श्री रामचन्द्रजी विश्वरूप हैं– (यह सारा विश्व उन्हीं का रूप है) वेद जिनके अंग–अंग में लोकों की कल्पना निम्नवत् करते हैं।

- **जासु घ्रान अस्विनीं कुमारा। निसि अरु दिवस निमेष अपारा।।**
  श्रवण दिसा दस बेद बखानी। मारुत स्वास निगम निज बानी।।

पताल (जिन विश्व रूप भगवान का) चरण है, ब्रह्मलोक सिर है, अन्य (बीच के सब) लोकों का विश्राम (स्थिति) जिनके अन्य भिन्न–भिन्न अंगों पर है। भयंकर काल जिनका भृकुटि संचालन (भौहों का चलना) है। सूर्य नेत्र है, बादलों का समूह बाल है।

- **जासु घ्रान अस्विनीं कुमारा। निसि अरु दिवस निमेष अपारा।।**
  श्रवण दिसा दस बेद बखानी। मारुत स्वास निगम निज बानी।।

अश्विनी कुमार जिनकी नासिका हैं, रात और दिन जिनके अपार निमेष (पलक मारना और खोलना) हैं। दसों दिशाएं कान है, वेद ऐसा कहते हैं। वायु श्वास हैं और वेद जिनकी अपनी वाणी है।

- **अधर लोभ जम दसन कराला। माया हास बाहु दिगपाल।।**
  आनन अनल अंबुपति जीहा। उतपति पालन प्रलय समीहा।।

लोभ जिनका होठ (अधर) है, यमराज भयानक दाँत है। माया हँसी है, दिक्पाल भुजाएँ। अग्नि मुख है, वरुण जीभ है। उत्पत्ति, पालन और प्रलय जिनकी चेष्टा (क्रिया) है।

- **रोम राजि अष्टादस भारा। अस्थि सैल सरिता नस जारा।।**
  उदर उदधि अधगो जातना। जगमय प्रभु का बहु कलपना।।

अठारह प्रकार की असंख्य वनस्पतियाँ जिनकी रोमवली हैं, पर्वत अस्थियाँ हैं, नदियाँ नसों का जाल हैं, समुद्र पेट है और नरक जिनकी नीचे की इन्द्रियाँ हैं। इस प्रकार प्रभु विश्वमय है, अधिक कल्पना क्या की जाय।

- **अहंकार सिव बुद्धि अज मन ससि चित्त महान।**
  मनुज वास सचराचर रूप राम भगवान।।

शिवजी जिनका अहंकार हैं, ब्रह्मा बुद्धि है, चन्द्रमा मन हैं और महान् (विष्णु) ही चित्त हैं। उन्हीं चराचर रूप भगवान श्रीरामजी ने मनुष्य रूप में निवास किया है।

- **अस बिचार सुनु प्रानपति प्रभु सन वयरू बिहाइ।**
  प्रीति करहु रघुबीर पद मम अहिवात न जाइ।।

हे प्रानपति सुनिये, ऐसा विचारकर प्रभु से बैर छोड़कर श्री रघुवीर के चरणों में प्रेम कीजिये जिससे मेरा सुहाग न जाय।

स्त्रियों के स्वभाविक आठ अवगुण

(लं०का० पृष्ठ संख्या ७७०)

- **नारि सुभाउ सत्य सब कहहीं। अवगुन आठ सदा उर रहहीं।।**
  साहस अनृत चपलता माया। भय अविवेक असौच अदाया।।

स्त्री का स्वभाव सब सत्य ही कहते हैं कि उसके हृदय में आठ अवगुण सदा रहते हैं, साहस, झूठ, चंचलता, माया (छल), भय (डरपोकन), अविवेक (मूर्खता) और निर्दयता।

दूत के रूप में श्री राम द्वारा लंका भेजे जाने पर अंगद द्वारा, रावण की सभा में उसका अभिमान चूर्ण कर, चौदह प्राणियों को मुरदे के समान बताना।

(लं०का० पृष्ठ संख्या ७८५)

- **कौल कामबस कृपनि बिमूढ़ा। अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा।।**

वाममार्गी, कामी, कंजूस, अत्यन्त मूढ़, अति दरिद्र, बदनाम, बहुत बूढ़ा।

- **सदारोगबस संतत क्रोधी। बिष्णु बिमुख श्रुति संत बिरोधी।।**
  तनु पोषक निंदक अघ खानी। जीवत सब सम चौदह प्रानी।।

नित्य का रोगी, निरन्तर क्रोध युक्त रहने वाला, भगवान विष्णु से विमुख, वेद और संतों का विरोधी, अपना ही शरीर पोषण करने वाला, परायी निन्दा करने वाला और पाप की खान (महान पापी) – ये चौदह प्राणी जीते ही मुरदे के समान हैं। एवं इन्हें मारने में कुछ भी पुरुषत्व (बहादुरी) नहीं है।

मेघनाद के साथ युद्ध में लक्ष्मणजी के मूर्छित हो जाने पर विलाप (मनुष्य लीला) करते हुए सहोदर (छोटे) भाई के महत्व को बताते हुए प्रभु श्री राम कहते हैं।

(लं०का० पृष्ठ संख्या ८१४)

- **सुत बित नारि भवन परिवारा। होहिं जाहिं जग बारहिं बारा।।**
  अस विचारि जियँ जागहु ताता। मिलइ न जगत सहोदर भ्राता।।

पुत्र, धन, स्त्री, घर और परिवार – ये जगत में बार–बार होते और जाते हैं, परन्तु जगत में सहोदर भाई बार–बार नहीं मिलता। हृदय में ऐसा विचारकर हे तात ! जागो।

- **जैहउँ अवध कवन मुहु लाई। नारिं हेतु प्रिय भाइ गँवाई।।**
  बरू अपजस सहतेउँ जगमाहीं। नारि हानि बिसेष छति नाहीं।।

स्त्री के लिये प्यारे भाई को खोकर, मैं कौन–सा मुँह लेकर अवध जाऊँगा? मैं जगत में बदनामी भले ही सह लेता (कि राम में कुछ भी वीरता नहीं है जो स्त्री को खो बैठे)। स्त्री की हानि से (इस हानि को देखते) कोई विशेष क्षति नहीं थी।

दुष्ट तथा परद्रोह मे लगे व्यक्तियों का परिणाम।
(लं०का० पृष्ठ संख्या ८४८)

- **निफल होहिं रावन सर कैसे। खल के सकल मनोरथ जैसे।।**

रावण के बाण किस प्रकार निष्फल होते हैं जैसे दुष्ट मनुष्य के सब मनोरथ।

- **विफल होहिं सब उद्यम ताके। जिमि परद्रोह निरत मनसाके।।**

उसके (रावण के) सब उद्योग वैसे ही निष्फल हो रहे हैं जैसे परद्रोह में लगे हुए चित्त वाले मनुष्य के होते हैं। (लं.का. पृष्ठ संख्या ८४६)

विषयों के सेवन से उन्हें भोगने की इच्छा में वृद्धि।
(लं०का० पृष्ठ संख्या ८५०) दो संख्या ६२

जिमि जिमि प्रभु हर तासु सिर तिमि तिमि होहिं अपार।
सेवत विषय बिबर्ध जिमि नित नित नूतन मार।।

जैसे–जैसे प्रभु उसके (रावण के) सिरों को काटते वैसे–ही–वैसे वे अपार होते जाते हैं। जैसे विषयों का सेवन करने से काम (उन्हें भोगने की इच्छा) दिन–प्रतिदिन नया–नया बढ़ता जाता है।

तीर्थ में किये हुए पाप का परिणाम।
(लं०का० पृष्ठ संख्या ८५६)

- **तब रघुपति रावन के, सीस भुजा सर चाप।**
  काटे बहुत बढ़े पुनि, जिमि तीरथ कर पाप।।

तब श्रीरघुनाथ जी ने रावण के सिर, भुजाएँ, वाण और धनुष काट डाले पर वे फिर बहुत बढ़ गये, जैसे तीर्थ में किये हुए पाप बढ़ जाते हैं (कई गुना अधिक भयानक फल उत्पन्न करते हैं)।

<u>मोह का प्रभाव</u>

काकभुशुण्डिजी (श्रीराम कथा सुनाते हुए) हरि वाहन गरुड़जी द्वारा मोह के विषय में उल्लेख करने पर कहते हैं : –
(उ०का० पृष्ठ संख्या ९५७--९५९)

- **तुम्ह निज मोह कही खग साईं। सो नहिं कछु आजरज गोसाईं।।**
  नारद भव विरंचि सनकादी। जे मुनिनायक आतमबादी।।

हे पक्षियों के स्वामी ! आपने अपना मोह कहा, सो हे गोसाईं ! यह कुछ आश्चर्य नहीं है। नारदजी, शिवजी, ब्रह्माजी और सनकादि जो आत्मतत्व के मर्मज्ञ और उसका उपदेश करने वाले श्रेष्ठ मुनि हैं।

- **मोह न अंध कीन्ह केहि केही। को जग काम नचाव न जेही।।**
  तृष्ना केहि न कीन्ह बौराहा। केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा।।

उनमें से भी किस–किस को मोह ने अंधा (विवेक शून्य) नहीं किया? जगत में ऐसा कौन है जिसे काम ने न नचाया हो ? तृष्णा ने किसको मतवाला नहीं बनाया ? क्रोध ने किसका हृदय नहीं जलाया ?

- **ग्यानी तापस सूर कबि कोबिद गुन आगार।**
  केहि कै लोभि बिडंबना कीन्हि न एहि संसार।।

इस संसार में ऐसा कौन ज्ञानी, तपस्वी, शूरवीर, कवि, विद्वान और गुण का घर है जिसकी लोभ ने विडम्बना (मिट्टी पलीद) न की हो।

मद का प्रभाव

- **श्री मद बक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि।**
  मृगलोचनि के नैन सर को अस लाग न जाहि।।

लक्ष्मी के मद ने किसको बहरा नहीं कर दिया ? ऐसा कौन है ? जिसे मृगनयनी (युवती स्त्री) के नेत्र वाण न लगे हों।

मान और ममता का प्रभाव

- **गुन कृत सन्यपात नहिं के ही। कोउ न मान मद तजेउ निबेही।।**
  जोबन ज्वर केहि नहिं बलकावा। ममता केहिकर जस न नसावा।।

रज तम आदि गुणों का किया हुआ सन्निपात किसे नहीं हुआ ? ऐसा कोई नहीं है जिसे मान और मद ने अछूता छोड़ा हो। यौवन के ज्वर ने किसे आपे से बाहर नहीं किया। ममता ने किसके यश का नाश नहीं किया?

डाह, चिन्ता व माया का प्रभाव

- **मच्छर काहि कलंक न लावा। काहि न सोक समीर डोलावा।।**
  चिंता साँपिन को नहि खाया। को जग जाहि न व्यापी माया।।

मत्सर (डाह) ने किसको कलंक नहीं लगाया ? शोक रूपी पवन ने किसे नहीं हिला दिया ? चिन्ता रूपी साँपिन ने किसे नहीं खा लिया ? जगत में ऐसा कौन है ? जिसे माया न व्यापी हो ?

इच्छाओं का प्रभाव

- **कीट मनोरथ दारु सरीरा। केहि न लाग घुन को अस धीरा।।**
  सुत वित लोक ईषना तीनी। केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी।।

मनोरथ कीड़ा है, शरीर लकड़ी है। ऐसा धैर्यवान कौन जिसके शरीर में यह कीड़ा न लगा हो ? पुत्र की, धन की और लोक प्रतिष्ठा की – इन तीन प्रबल इच्छाओं ने किस की बुद्धि को मलिन नहीं कर दिया (बिगाड़ दिया)।

माया का प्रभाव

- ब्याधि रहेउ संसार महुँ माया कटक प्रचंड।
  सेनापति कामादि भट दंभ कपट पांषड।।

माया की प्रचण्ड सेना संसार भर में छायी हुई है। कामादि (काम, क्रोध और लोभ) उसके सेनापति हैं और दंभ, कपट और पाखण्ड योद्धा हैं।

- सो दासी रघुबीर कै समुझे मिथ्या सोपि।
  छूट न राम कृपा बिनु नाथ कहउँ पद रोपि।।

वह माया श्री रघुवीर की दासी है। यद्यपि समझ लेने पर वह मिथ्या ही है, किन्तु वह श्री रामजी की कृपा के बिना छूटती नहीं। हे नाथ! यह मैं प्रतिज्ञा करके कहता हूँ।

श्री काकभुशुण्डिजी द्वारा अपने पूर्व जन्मों की कथा के प्रसंग में बतायी गई कुछ महत्वपूर्ण बातें।
(उ०का० पृष्ठ संख्या १००२–१००३)

- सबका हित करने अथवा चाहने वाला कभी दुखी नहीं हो सकता।
- इसी प्रकार दूसरे से द्रोह करने वाला निर्भय नहीं हो सकता ।
- कामी कलंक रहित (बेदाग) नहीं रह सकता ।
- ब्राह्मण का बुरा करने से वंश नहीं रह सकता।
- परस्त्रीगामी उत्तम गति नहीं पा सकता।
- भगवान की निन्दा करने वाले कभी सुखी नहीं हो सकते।
- नीति जाने बिना राज्य नहीं रह सकता।
- श्री हरि के चरित्र वर्णन करने पर पाप नहीं रह सकते ।
- बिना पुण्य परोपकार के यश (प्राप्त) नहीं हो सकता।
- श्री हरि (श्री राम) भक्ति के समान कोई दूसरा लाभ नहीं है ।
- चुगलखोरी के समान कोई दूसरा पाप नहीं है।
- दया के समान दूसरा धर्म नहीं है।
- मनुष्य शरीर पाकर भी श्री राम की भक्ति न करने के समान दूसरी कोई हानि नहीं है।

प्रवर्षण पर्वत पर भगवान श्रीराम चन्द्रजी महाराज द्वारा वर्षा ऋतु का वर्णन करते हुए (लक्ष्मणजी के माध्यम से) बतायी गई कुछ ध्यान देने योग्य बातें।

(कि०का० पृष्ठ संख्या ६७६–६८३)

- दुष्ट की प्रीति स्थिर नहीं रहती।
- विद्या पाकर विद्वान नम्र हो जाते हैं।
- पाखण्ड–मत के प्रचार से सदग्रन्थ गुप्त (लुप्त) हो जाते हैं। (अतः पाखण्ड का प्रचार–प्रसार नहीं करना चाहिए)
- क्रोध धर्म को दूर कर देता है (अर्थात् क्रोध का आवेश होने पर धर्म का ज्ञान नहीं रह जाता)
- उपकारी पुरुष की सम्पत्ति (धन, शक्ति, ज्ञान) शोभामान होती है। (अर्थात् धनवान, शक्तिशाली, ज्ञानवान होना तभी सार्थक है जब यह सब परोपकार में लगे)
- स्त्रियाँ स्वतन्त्र होने से बिगड़ जाती हैं।

अतः (विशेष तौर पर) युवती स्त्री को स्वतन्त्र नहीं छोड़ना चाहिये।

- विद्वान लोग मोह, मद और मान का त्याग कर देते हैं।

अर्थात् मोह, मद, मान, अहंकार, लोभ, ईर्ष्या, चुगलखोरी, भेदभाव (छोटे–बड़े, जाति, धर्म, सम्प्रदाय, पंथ आदि का) का अभाव (त्याग ही) विद्वता अथवा ज्ञानी होने का प्रतीक है।

- हरि भक्त के हृदय में काम नहीं उत्पन्न होता।

(अर्थात् काम, इच्छा व कामना आदि का अभाव (त्याग) ही हरि भक्त के लक्षण हैं)

- सुराज्य पाकर प्रजा की वृद्धि होती है।

अर्थात् प्रजा का सुख, समृद्धि, सम्पन्नता एवं शांति सुराज्य के मापदण्ड हैं।)

- **कुपुत्र के उत्पन्न होने से कुल के उत्तम धर्म (श्रेष्ठ आचरण) नष्ट हो जाते हैं।**

अतः सन्तान को सदैव श्रेष्ठ आचरण की शिक्षा (स्वयं अपनाकर) देनी चाहिये।

- **कुसंग पाकर ज्ञान नष्ट हो जाता है और सुसंग पाकर उत्पन्न हो जाता है।**

(अतः सर्वप्रथम संतों व असंतों के लक्षणों को भलीभांति (खूब अच्छी तरह समझकर) कुसंगति से बचना चाहिये तथा सुसंगति करनी चाहिये।)

- **सन्तोष लोभ को सोख लेता है।**

(अतः लोभ पर विजय प्राप्त करने के लिये सन्तोष की प्रवृत्ति (आदत) डालनी चाहिये)।

- **मूर्ख (विवेक शून्य) कुटुम्बी (गृहस्थ) धन के बिना व्याकुल हो जाता है।**

(अतः गृहस्थ को धन के अभाव में व्याकुल होकर गलत मार्ग पर जाने की बजाय सत्कर्मों (धर्मानुकूल कर्मों) व परिश्रम द्वारा धनोपार्जन का प्रयास करना चाहिये।)

- **चले हरषि तजि नगर नृप तापस बनिक भिखारि।**
  जिमि हरि भगत पाइ श्रम तजहिं आश्रमी चारि।।

(शरदऋतु पाकर) राजा, तपस्वी, व्यापारी और भिखारी (क्रमशः विजय, तप, व्यापार और भिक्षा के लिये) हर्षित होकर नगर को छोड़ चले। जैसे श्री हरि की भक्ति पाकर चारों आश्रम वाले (नाना प्रकार के साधन रूपी) श्रमों को त्याग देते हैं।

(अतः उद्यमियों को वर्षा ऋतु समाप्त होने पर अथवा शरद ऋतु प्रारम्भ होते ही अपने व्यापार, व्यवसाय, ज्ञानोपार्जन आदि के उत्थान में लग जाना चाहिये)।

• श्री हरि (प्रभु श्रीराम) के शरण में चले जाने पर एक भी बाधा नहीं रहती।

(अतः बाधा, विपत्ति (आने पर) के समाधान के लिये पूरी आस्था व विश्वास के साथ पूर्ण समर्पणकर प्रभु श्रीराम (श्री हरि) की शरण जाना चाहिये। सांसारिक साधनों/श्रोतों का भरोसा त्यागकर प्रभु (श्री राम) की शरण हर प्रकार की बाधा/विपत्ति का निश्चय समाधान है।)

• दूसरे की सम्पत्ति देखकर दुष्ट को दुख होता है।

(अतः दूसरे की सम्पत्ति/उन्नति देखकर ईर्ष्या अथवा दुखी नहीं होना चाहिये, वरन् प्रसन्न होना चाहिये। (ऐसा करने पर तुम्हारी उन्नति व समृद्धि निश्चित है।)

• भगवान श्री शंकर जी का द्रोही सुख नहीं पाता।

प्रभु श्री राम ने श्री रामेश्वर में शिव लिंग की स्थापना के पश्चात् अपने श्री मुख से स्वयं कहा है।

• शिव द्रोही मम भगत कहावा। सो नर सपनेहुँ मोहि न पावा।

(जो शिव से द्रोह रखता है और मेरा भक्त कहलाता है, वह मनुष्य स्वप्न में भी मुझे नहीं पाता) (लं.का. पृष्ठ संख्या ७५८)

अतः श्री राम की भक्ति प्रांप्त करने के लिए भगवान शिव व माता पार्वती की भक्ति अवश्य करनी चाहिये।

(अतः प्रतिदिन **ऊँ नमः शिवाय्** मंत्र का १०० बार जप करना चाहिये) तथा प्रतिदिन श्री सीताराम अथवा श्री राम नाम का जप अथवा लेखन १०८ बार अवश्य करना चाहिये)।

• संतों के दर्शन से पाप दूर हो जाते हैं।

सदैव सत्संगति हेतु प्रयासरत रहना चाहिये। संतों का संग व दर्शन सदैव कल्याणकारी है।

सत्संग की महिमा

लंकिनी नामक राक्षसी पवन पुत्र श्री हनुमान जी के दर्शन कर कहती हैं : –

- **तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।**
  तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग।।

हे तात ! स्वर्ग और मोक्ष के सब सुखों को तराजू के एक पलड़े में रक्खा जाय तो भी वे सब मिलकर (दूसरे पलड़े पर रक्खे हुए) उस सुख के बराबर नहीं हो सकते, जो लव (क्षण) मात्र के सत्संग से होता है।

(सु०का० पृष्ठ संख्या ७०२)

- **ब्राह्मण के साथ वैर करने से कुल का नाश हो जाता है।**
- **ब्राह्मण सब प्रकार से एवं सदैव पूज्यनीय हैं अतः यथा योग्य ब्राह्मणों की सेवा, सत्कार करना चाहिये।**
- **सदगुरु के मिल जाने पर सन्देह और भ्रम के समूह नष्ट हो जाते हैं।**

(जो सन्देह और भ्रम का समाधान कर हरि (श्रीराम) भक्ति के मार्ग पर अग्रसर कर दे, वही सच्चा गुरु है)

(सदगुरु का मिलना अत्यन्त दुर्लभ है। सदगुरु वही है जो शिष्य का सदैव कल्याण चाहे तथा उसके सभी सन्देहों, भ्रमों और अज्ञान को दूर कर दे। सदगुरु मिल जाने पर तन, मन, धन से उसकी सेवा, पूजा करनी चाहिये)।

- **जब तक सदगुरु न मिले तब तक भगवान शंकर को अपना गुरु बना लेना चाहिये क्योंकि वे ही जगत के गुरु हैं।**

राम भक्ति की महिमा

श्री लक्ष्मण जी द्वारा श्री सीता–राम के साथ वन जाने हेतु आज्ञा मांगने पर माता सुमित्रा अपने भाग्य की सराहना करते हुए कहती हैं :–

(अयो०का० पृष्ठ संख्या ३८६)

- **भूरि भाग भाजन भयहु मोहि समेत बलि जाऊँ।**
  जौ तुम्हरें मन छाड़ि छलु कीन्ह राम पद ठाऊँ।

मै बलिहारी जाती हूँ (हे पुत्र !) मेरे समेत तुम बड़े ही सौभाग्य के पात्र हुए, जो तुम्हारे चित ने छल छोड़कर श्री राम के चरणों में स्थान प्राप्त किया है।

माता सुमित्रा अगली चौपाई में कहती हैं

- **पुत्रवती जुबती जग सोई। रघुपति भगतु जासु सुत होई।।**
  नतरू बाँझ भलि बादि बिआनी। राम बिमुख सुत तें हित जानी।।

संसार में वही युवती स्त्री पुत्रवती है जिसका पुत्र श्री रघुनाथजी का भक्त हो। नहीं तो जो राम से विमुख पुत्र से अपना हित जानती है, वह तो बाँझ ही अच्छी। पशु की भाँति उसका ब्याना (पुत्र प्रसव करना) व्यर्थ है।

(भावार्थ – यह है कि माता, पिता व गुरु का कर्तव्य है कि पहले (स्वयं) तथा फिर बालक को बचपन से ही राम कथा/राम भक्ति व श्री राम चरित मानस पढ़ने की ओर प्रेरित करें।)

(इससे बालक व माता, पिता एवं गुरु सभी का मनुष्य जन्म प्राप्त करना सार्थक होगा।)

<u>लक्ष्मणजी द्वारा निषाद राज को ज्ञान का उपदेश</u>

श्री सीता रामजी को वनवास के दौरान श्रृंगवेरपुर में जमीन पर सोते हुए देखकर निषादराज द्वारा कैकेयी को भला बुरा कहने पर व निषाद को दुखी देखकर लक्ष्मणजी ज्ञान, वैराग्य और भक्ति के रस से सनी हुई मीठी और कोमल वाणी से कहते हैं :–

(अयो०का० पृष्ठ संख्या ४०३–४०४)

- **काहु न कोउ सुख दुख कर दाता।**
  निज कृत करम भोग सब भ्राता।।

कोई किसी को सुख–दुख देने वाला नहीं है। सब अपने ही किये हुए कर्मों का फल भोगते हैं।

- **अस बिचारि नहिं कीजिअ रोसू। काहुहि बाद न देइअ दोसू।।**

ऐसा विचारकर क्रोध नहीं करना चाहिये और न किसी को व्यर्थ दोष ही देना चाहिये।

बनवास के दौरान श्रृंगवेरपुर से सुमन्त्रजी को लौटाते हुए प्रभु श्री राम कहते हैं:–
(अयो०का० पृष्ठ संख्या ४०६)

- **संभावित कहुँ अपजसु लाहू। मरन कोटि सम दारुन दाहू।।**

प्रतिष्ठित पुरुष के लिये अपयश की प्राप्ति करोड़ों मृत्यु के समान भीषण संताप देने वाली है।।

श्री सीता, राम व लक्ष्मणजी को बन पहुचाँकर अयोध्या लौटने पर महाराज दशरथजी को धीरज बँधाते हुए सुमन्त्रजी कहते हैं:–
(अयो०का० पृष्ठ संख्या ४५२)

- **जनम मरन सब दुख सुख भोगा। हानि लाभ प्रिय मिलन बियोगा।।**
  काल करम बस होहिं गोसाईं। बरबस राति दिवस की नाईं।।

जन्म–मरण, सुख–दुःख के भोग, हानि–लाभ, प्यारों का मिलना बिछुड़ना, ये सब हे स्वामी दिन रात की भाँति, काल और कर्म के अधीन बरबस होते रहते हैं। मूर्ख लोग सुख में हर्षित होते हैं और दुख में रोते हैं, पर धीर पुरुष अपने मन में दोनों को समान समझते हैं।

— ● —

६.२

प्रभु श्री सीताराम के निवास करने योग्य स्थान

वनवास के दौरान श्री बाल्मीकि मुनि से भेंट होने पर भगवान श्री राम द्वारा वन में श्री सीता जी व लक्ष्मणजी सहित कुछ समय निवास करने योग्य स्थान के विषय में पूँछने पर श्री बाल्मीकि जी कहते हैं: –

- **पूँछेहु मोहि कि रहौं कहुँ, मैं पूँछत सकुचाउँ।**
  जहँ न होहु तहँ देहु कहि, तुम्हहि देखावौं ठाउँ।।

आपने मुझसे पूछा कि मैं कहाँ रहूँ ? परन्तु मैं यह पूछते सकुचाता हूँ कि जहाँ आप न हों वह स्थान बता दीजिये। तब मैं आपके रहने के लिये स्थान दिखाऊँ।

आगे, प्रभु श्रीराम की मनुष्य लीला को सार्थक करने हेतु श्री बाल्मीकि जी कहते हैं: –

- **सुनहु राम अब कहहुँ निकेता। जहां बसहु सिय लखन समेता।।**
  जिन्ह के श्रवन समुद्र समाना। कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना।।

हे रामजी ! सुनिये, अब मैं वे स्थान बताता हूँ जहाँ आप श्री सीताजी और लक्ष्मणजी समेत निवास करिये।

जिनके कान समुद्र की भांति आप की सुन्दर कथा रूपी अनेकों सुन्दर नदियों से।

- **भरहिं निरन्तर होहिं न पूरे। तिन्ह के हिय तुम्ह कहुँ गृह रूरे।।**
  लोचन चातक जिन्ह करि राखे। रहहिं दरस जलधर अभिलाषे।।

निरन्तर भरते रहते हैं, परन्तु कभी पूरे (तृप्त) नहीं होते, उनके हृदय आपके लिये सुन्दर घर है और जिन्होंने अपने नेत्रों को चातक बना रक्खा है जो आपके दर्शन रूपी मेघ के लिये सदा लालायित रहते हैं;

- **निदरहिं सरित सिंधु सर भारी। रूप बिंदु जल होहिं सुखारी।**
  तिन्ह के हृदय सदन सुखदायक। बसहु बन्धु सिय सह रघुनायक।।

तथा जो भारी–भारी नदियों, समुद्रों और झीलों का निरादर करते हैं और आपके सौन्दर्य (रूपी मेघ) के एक बूँद जल से सुखी हो जाते हैं (अर्थात् आपके दिव्य सच्चिदानन्दमय स्वरूप के किसी एक अंग की जरा सी झाँकी के सामने स्थूल, सूक्ष्म और कारण तीनों जगत के, अर्थात् पृथ्वी स्वर्ग और ब्रह्मलोक तक के सौन्दर्य का तिरस्कार करते हैं), हे रघुनाथ! उन लोगों के हृदयरूपी सुखदायी भवनों में आप भाई लक्ष्मणजी और सीताजी सहित निवास कीजिये।

- **जसु तुम्हार मानस बिमल, हंसिन जीहा जासु।**
  मुकताहल गुन गन चुनइ, राम बसहु हियँ तासु।।

आपके यशरूपी निर्मल मानसरोवर में जिसकी जीभ हंसिनी बनी हुई आपके गुणसमूह रूपी मोतियों को चुगती रहती है, हे रामजी ! आप उसके हृदय में बसिये।।

- **प्रभु प्रसाद सुचि सुभग सुबासा। सादर जासु लहइ नित नासा।।**
  तुम्हहि निबेदित भोजन करहीं। प्रभु प्रसाद पट भूषन धरहीं।।

जिसकी नासिका प्रभु (आप) के पवित्र और सुगन्धित (पुष्पादि) सुन्दर प्रसाद को नित्य आदर के साथ ग्रहण करती (सूँघती) है, और जो आपको अर्पण करके भोजन करते हैं और आपके प्रसाद रूप ही वस्त्राभूषण धारण करते हैं;

- **सीस नवहिं सुर गुरु द्विज देखी। प्रीति सहित करि बिनय बिसेषी।।**
  कर नित करहिं राम पद पूजा। राम भरोस हृदय नहि दूजा।।

जिनके मस्तक, गुरु और ब्राह्मणों को देखकर बड़ी नम्रता के साथ प्रेम सहित झुक जाते हैं; जिनके हाथ नित्य श्रीराम चन्द्र जी (आप) के चरणों की पूजा करते हैं, और जिनके हृदय में श्रीराम चन्द्रजी (आप) का ही भरोसा है, दूसरा नहीं;

- **चरन रामतीरथ चलि जाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं।।**
  मंत्रराजु नित जपहिं तुम्हारा। पूजहिं तुम्हहि सहित परिवारा।।

तथा जिनके चरण श्री रामचन्द्र जी (आप) के तीर्थों में चलकर जाते हैं, हे रामजी ! आप उनके मन में निवास कीजिये। जो नित्य आपके (रामनाम रूप) मन्त्रजाप को जपते हैं और परिवार सहित आपकी पूजा करते हैं।

- **तरपन होम करहिं बिधि नाना। बिप्र जेवाँइ देहिं बहु दाना।।**
  तुम्ह तें अधिक गुरहि जियँ जानी। सकल भायँ सेवहिं सनमानी।।

जो अनेकों प्रकार से तर्पण और हवन करते हैं, तथा ब्राह्मणों को भोजन कराकर बहुत दान देते हैं, तथा जो गुरु को हृदय में आपसे भी अधिक (बड़ा) जानकर सर्वभाव से सम्मान करके उनकी सेवा करते हैं;

- **सबु करि मागहिं एक फलु राम चरण रति होउ।**
  तिन्ह के मन मंदिर बसहु सिय रघुनंदन दोउ।।

और ये सब कर्म करके सबका एकमात्र यही फल माँगते हैं कि श्री रामचन्द्रजी के (आपके) चरणों में हमारी प्रीति हो; उन लोगों के मनरूपी मन्दिरों में श्रीसीताजी और रघुकुल को आनन्दित करने वाले आप दोनों बसिये।

- **काम कोह मद मान न मोहा। लोभ न छोभ न राग न द्रोहा।।**
  जिन्ह के कपट दंभ नहिं माया। तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया।।

जिनके न तो काम, क्रोध, मद, अभिमान और मोह है; न लोभ है, न क्षोभ है; न राग है, न द्वेष है; और न कपट, दम्भ और माया ही है–हे रघुराज ! आप उनके हृदय में निवास कीजिये।

- **सबके प्रिय सब के हितकारी। दुख सुख सरिस प्रसंसा गारी।।**
  कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी। जागत सोबत सरन तुम्हारी।।

जो सबके प्रिय और सबका हित करने वाले हैं; जिन्हें दुःख और सुख तथा प्रशंसा (बड़ाई) और गाली (निन्दा) समान हैं, जो विचार कर सत्य और प्रिय वचन बोलते हैं तथा जो जागते सोते आपकी ही शरण हैं;

- **तुम्हहिं छाड़ि गति दूसर नाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं।।**
  जननी सम जानहिं पर नारी। धनु पराव विष तें विष भारी।।

और आपको छोड़कर जिनके दूसरी गति (आश्रय) नहीं है, हे रामजी ! आप उनके मन में बसिये। जो परायी स्त्री को जन्म देने वाली माता के समान जानते हैं और पराया धन जिन्हें विष से भी भारी है;

- **जे हरषहिं पर संपति देखी। दुखित होहिं पर बिपति बिसेषी।।**
  जिन्हहि राम तुम्ह प्रान पिआरे। तिन्ह के मन सुभ सदन तुम्हारे।।

जो दूसरे की सम्पत्ति देखकर हर्षित होते हैं और दूसरे की विपत्ति देखकर विशेष रूप से दुखी होते हैं और हे रामजी ! जिन्हें आप प्राणों के समान प्यारे हैं, उनके मन आपके रहने योग्य शुभ भवन हैं।

- **स्वामि सखा पितु मातु गुरु जिन्ह के तुम सब तात।**
  मन मंदिर तिन्ह के बसहु सीय सहित दोउ भ्रात।।

हे तात ! जिनके स्वामी, सखा, पिता, माता, गुरु सब कुछ आप ही हैं, उनके मनरूपी मन्दिर में सीता सहित दोनों भाई निवास कीजियें।

- **अवगुन तजि सब के गुन गहहीं। बिप्र धेनु हित संकट सहहीं।।**
  नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका। घर तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका।।

जो अवगुणों को छोड़कर सबके गुणों को ग्रहण करते हैं, ब्राह्मण और गौ के लिये संकट सहते हैं, नीति निपुणता में जिनकी जगत में मर्यादा है, उनका सुन्दर मन आपका घर है।

- **गुन तुम्हार समुझइ निज दोसा। जेहि सब भाँति तुम्हार भरोसा।।**
  राम भगत प्रिय लागहिं जेही। तेहि उर बसहु सहित बैदेही।।

जो गुणों को आपका और दोषों को अपना समझता है, जिसे सब प्रकार से आपका ही भरोसा है और रामभक्त जिसे प्यारे लगते हैं, उसके हृदय में आप श्री सीता जी सहित निवास कीजिये।

- **जाति पाँति धनु धरमु बड़ाई। प्रिय परिवार सदन सुखदाई।।**
  सब तजि तुम्हहि रहइ उर लाई। तेहि के हृदयँ रहहु रघुराई।।

जाति पाँति, धन, धर्म, बड़ाई, प्यारा परिवार और सुख देने वाला घर–सबको छोड़कर जो केवल आपको ही हृदय में धारण किये रहता है, हे रघुनाथजी ! आप उसके हृदय में रहिये।

- **सरगु नरकु अपबरगु समाना। जहँ तहँ देख धरें धनु बाना।।**
  करम बचन मन राउर चेरा। राम करहु तेहिं के उर डेरा।।

स्वर्ग, नर्क और मोक्ष जिसकी दृष्टि में समान है, क्योंकि वह जहाँ–तहाँ (सब जगह) केवल धनुष–बाण धारण किये आपको ही देखता है; और जो कर्म से, बचन से और मन से आपका दास है, हे रामजी ! आप उसके हृदय में डेरा कीजिये।

- **जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु, तुम्ह सन सहज सनेहु।**
  बसहु निरन्तर तासु उर, सो राउर निज गेहु।।

जिसको कभी कुछ भी नहीं चाहिये और जिसका आपसे स्वभाविक प्रेम है, आप उसके मन में निरन्तर निवास कीजिये; वह आपका अपना घर है।

- **एहि विधि मुनिबर भवन देखाए। बचन सप्रेम राम मन भाए ।।**
  कह मुनि सुनहु भानुकुल नायक। आश्रम कहउँ समय सुखदायक ।।

इस प्रकार मुनि श्रेष्ठ बाल्मीकि जी ने श्रीराम चन्द्रजी को घर दिखलाये। फिर मुनि ने कहा – हे स्वामी ! अब मैं इस समय के लिये सुखदायक आश्रम कहता हूँ (निवास स्थान बतलाता हूँ)।

- **चित्रकूट गिरि करहु निवासू। तहँ तुम्हार सब भाँति सुपासू।।**

आप चित्रकूट पर्वत पर निवास कीजिये, वहाँ आपके लिये सब प्रकार की सुविधा है।

— ● —

६.३

पक्षिराज गरुड़जी द्वारा श्री काकभुशुण्डिजी से पूछे गये ७ प्रश्न व उनके उत्तर

श्री काकमुशुण्डिजी से सम्पूर्ण राम कथा एवं ज्ञान तथा भक्ति के विषय में सुनकर पक्षिराज गरुड़जी द्वारा सात प्रश्न व उनके उत्तर पूँछे गये जो निम्नवत् हैं : – (उ०का० पृष्ठ संख्या १०१६–१०२१)

- **प्रथमहिं कहहु नाथ मतिधीरा। सब ते दुर्लभ कवन सरीरा।।**
  बड़ दुख कवन कवन सुख भारी। सोउ संक्षेपहिं कहहु विचारी।।

हे नाथ ! हे धीरबुद्धि ! पहले तो यह बताइये कि सबसे दुर्लभ कौन–सा शरीर है ? फिर सबसे बड़ा दुःख कौन है और सबसे बड़ा सुख कौन–सा है, यह भी विचार कर संक्षेप में ही कहिये।

- **संत असंत मरम तुम्ह जानहु। तिन्ह कर सहज सुभाव बखानहु।।**
  कवन पुन्य श्रुति बिदित बिसाला। कहहु कवन अघ परम क़राला।।

संत और असंतों का मर्म (भेद) आप जानते हैं उनके सहज स्वभाव का वर्णन कीजिये। फिर कहिये कि श्रुतियों में प्रसिद्ध सबसे महान पुण्य कौन सा है और सबसे भयंकर पाप कौन है ?

- **मानस रोग कहहु समुझाई। तुम्ह सर्वग्य कृपा अधिकाई।।**
  तात सुनहु सादर अति प्रीती। मैं संक्षेप कहउँ यह नीती।।

फिर मानस रोगों को समझाकर कहिये। आप सर्वज्ञ हैं और मुझ पर आपकी कृपा भी बहुत है। (काकमुशुण्डिजी ने कहा–) हे तात ! अत्यन्त आदर और प्रेम के साथ सुनिये। मैं यह नीति संक्षेप से कहता हूँ।

- **नर तन सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाचत तेही।।**
  नरक स्वर्ग अपबर्ग निसेनी। ग्यान विराग भगति सुभ देनी।।

मनुष्य शरीर के समान कोई शरीर नहीं है। चर–अचर सभी जीव उसकी याचना करते हैं। यह मनुष्य–शरीर नरक, स्वर्ग और मोक्ष की सीढ़ी है तथा कल्याणकारी ज्ञान, वैराग्य और भक्ति को देने वाला है।

- **सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर। होहिं विषय रत मंद मंद तर।।**
काँच किरिच बदले ते लेहीं। कर ते डारि परस मनि देहीं।।

ऐसे मनुष्य शरीर को धारण (प्राप्त) करके भी जो लोग श्री राम का भजन नहीं करते और नीच से भी नीच विषय में अनुरक्त रहते हैं, वे पारस मणि को हाथ से फेंक देते हैं और बदले में काँच के टुकड़े ले लेते हैं।

- **नहि दरिद्र सम दुख जग माहीं। संत मिलन सम सुख जग नाहीं।।**
पर उपकार बचन मन काया। संत सहज सुभाउ खगराया।।

जगत में दरिद्रता के समान दुःख नहीं है तथा संतों के मिलने के समान जगत में सुख नहीं है। और हे पक्षिराज ! मन, वचन और शरीर से परोपकार करना, यह संतों का सहज स्वभाव है।

- **संत सहहिं दुख पर हित लागी। पर दुख हेतु असंत अभागी।।**
भूर्ज तरु सम संत कृपाला। पर हित निति सह बिपति बिसाला।।

संत दूसरों की भलाई के लिये दुःख सहते हैं और अभागे असंत दूसरों को दुख पहुँचाने के लिये। कृपालु संत भोज के वृक्ष के समान दूसरों के हित के लिये भारी विपत्ति सहते हैं (अपनी खाल तक उधड़वा लेते हैं)

- **सन इव खल पर बंधन करई। खाल कढ़ाइ बिपति सहि मरई।।**
खल बिनु स्वारथ पर अपकारी। अहि मूषक इव सुनु उरगारी।।

किन्तु दुष्ट लोग सन की भाँति दूसरों को बाँधते हैं और (उन्हें बाँधने के लिये) अपनी खाल खिंचवाकर बिपत्ति सहकर मर जाते हैं। हे सर्पों के शत्रु गरुड़जी ! सुनिये; दुष्ट बिना किसी स्वार्थ के साँप और चूहे के समान अकारण ही दूसरों का अपकार करते हैं।

- **पर संपदा बिनासि नसाहीं। जिमि ससि हति हिम उपल बिलाहीं।।**
दुष्ट उदय जग आरति हेतू। जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू।।

वे परायी सम्पत्ति का नाश करके स्वयं नष्ट हो जाते हैं, जैसे खेती का नाश करके ओले नष्ट हो जाते हैं। दुष्ट का अभ्युदय (उन्नति) अधम ग्रह केतु के उदय की भाँति जगत के दुःख के लिये ही होता है।

- **संत उदय संतत सुखकारी। बिस्व सुखद जिमि इंदु तमारी।**
परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा। पर निंदा सम अघ न गरीसा।।

और संतों का अभ्युदय सदा ही सुखकर होता है। जैसे चन्द्रमा और सूर्य का उदय विश्वभर के लिये सुखदायक है। वेदों में अहिंसा को परम धर्म माना है और परनिन्दा के समान भारी पाप नहीं है।

- **हर गुर निंदक दादुर होई। जन्म सहस्त्र पाब तन सोई।।
द्विज निदंक बहु नरक भोग करि। जग जनमइ बायस सरीर धरि।।**

शंकर जी और गुरु की निन्दा करने वाला मनुष्य (अगले जन्म में) मेढ़क होता है और वह हजार जन्म तक वही मेढ़क का शरीर पाता है। ब्राह्मणों की निन्दा करने वाला व्यक्ति बहुत से नरक भोगकर फिर जगत में कौए का शरीर धारण करके जन्म लेता है।

- **सुर श्रुति निंदक जे अभिमानी। रौरव नरक परहिं ते प्रानी।।
होहिं उलूक संत निंदा रत। मोह निसा प्रिय ग्यान भानु गत।।**

जो अभिमानी जीव देवताओं और वेदों की निन्दा करते हैं, वे रौख नरक में पड़ते हैं। संतों की निन्दा में लगे हुए लोग उल्लू होते हैं जिन्हें मोहरूपी रात्रि प्रिय होती है और ज्ञानरूपी सूर्य जिनके लिये बीत गया (अस्त हो गया) रहता है।

- **सब कै निंदा जे जड़ करही। ते चमगादुर होत अवतरहीं।।
सुनहु तात अब मानस रोगा। जिन्ह ते दुख पावहि सब लोगा।।**

जो मनुष्य सब की निन्दां करते हैं, वे चमगादड़ होकर जन्म लेते हैं। हे तात ! अब मानस-रोग सुनिये, जिनसे सब लोग दुःख पाया करते हैं।

- **मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला। तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला।।
काम बात कफ लोभ अपारा। क्रोध पित्त नित छाती जारा।।**

सब रोगों की जड़ मोह (अज्ञान) है। उन व्याधियों से फिर और बहुत से शूल उत्पन्न होते हैं। काम बात है, लोभ अपार (बढ़ा हुआ) कफ है और क्रोध पित्त है जो सदा छाती जलाता रहता है।

- **ममता दाद कंडु इरषाई। हरष विषाद गरह बहुताई।।
पर सुख देखि जरन सोइ छई। कुष्ट दुष्टता मन कुटलई।।**

ममता दाद है, ईर्ष्या (डाह) खुजली है, हर्ष-विषाद गले के रोगों की अधिंकता है, पराये सुख को देखकर जो जलन होती है, वही क्षयी है। दुष्टता और मन की कुटिलता ही कोढ़ है।

- **अहंकार अति दुखद डमरुआ। दंभ कपट मद मान नेहरुआ।।
तृस्ना उदरबृद्धि अति भारी। त्रिबिधि ईषना तरुन तिजारी।।**

अहंकार अत्यन्त दुःख देने वाला डमरू (गाँठ का) रोग है। दम्भ, कपट, मद और मान नेहरुआ (नसों का) रोग है। तृष्णा बड़ा भारी उदरवृद्धि (जलोदर) रोग है। तीन प्रकार (पुत्र, धन और मान) की प्रबल इच्छाएँ प्रबल तिजारी हैं।

- **एक ब्याधि बस नर मरहिं, ए असाधि बहु ब्याधि।**
  पीड़हि संतत जीव कहुँ, सो किमि लहै समाधि।।

एक ही रोग के वश होकर मनुष्य मर जाते हैं, फिर ये तो बहुत–से असाध्य रोग हैं। ये जीव को निरन्तर कष्ट देते रहते हैं, ऐसी दशा में वह समाधि (शान्ति) को कैसे प्राप्त करे ?

- **नेम धर्म आचार तप ग्यान जग्य जप दान।**
  भेषज पुनि कोटिन्ह नहिं रोग जाहिं हरिजान।।

नियम, धर्म, आचार (उत्तम आचरण), तप, ज्ञान, यज्ञ, जप, दान तथा और भी करोड़ों औषधियाँ हैं, परन्तु हे गरुड़जी ! उनसे ये रोग नहीं जाते।

- **जाने ते छीजहिं कछु पापी। नास न पावहिं जन परितापी।।**
  बिषय कुपथ्य पाइ अंकुरे। मुनिहु हृदयँ का नर बापुरे।।

प्राणियों को जलाने वाले ये पापी (रोग) जान लिये जाने से कुछ क्षीण अवश्य हो जाते हैं, परन्तु नाश को नहीं प्राप्त होते। विषयरूपी कुपथ्य पाकर ये मुनियों के हृदय में भी अंकुरित हो उठते हैं, तब बेचारे साधारण मनुष्य तो क्या चीज हैं।

- **राम कृपा नासहिं सब रोगा। जौं एहि भाँति बनै संजोगा।।**
  सदगुर बैद बचन बिस्वासा। संजम यह न विषय कै आसा।।

यदि श्रीरामजीकी कृपा से इस प्रकार का संयोग बन जाय तो ये सब रोग नष्ट हो जायँ। सदगुरुरूपी वैद्य के वचन में विश्वास हो। विषयों की आशा न करे, यही संयम (परहेज हो)।

- **रघुपति भगति सजीवन मूरी। अनूपान श्रद्धा मति पूरी।।**
  एहि बिधि भलेहिं सो रोग नसाहीं। नाहिं त जतन कोटि नहि जाहीं।।

श्री रघुनाथजी की भक्ति संजीवनी जड़ी है। श्रद्धा से पूर्ण बुद्धि ही अनुपान (दवा के साथ लिया जाने वाला मधु आदि) है। इस प्रकार का संयोग हो तो वे रोग भले ही नष्ट हो जायँ, नहीं तो करोड़ों प्रयत्नों से भी नहीं जाते।

— ● —

उपसंहार

इस अध्याय में निवेदक द्वारा अध्ययन एवं अनुभव के आधार पर अन्य लाभकारी पुस्तकों से कुछ महत्वपूर्ण व लोक हितकारी अंशों को संकलित किया गया है तथा अन्त में प्रभु श्री राम के चरण कमलों में सदैव प्रेम बना रहने हेतु प्रार्थना की गई है।

— ● —

७.१
क्षण भंगुर जीवन

देखो :– जीवन क्षण भंगुर है। अभी है, क्षण भर बाद रहेगा या नहीं, यहाँ की सभी चींजे ऐसी ही हैं, फिर किस मोह में पड़कर इस छोटे से जीवन के लिए इतनी गहरी नींव खोद रहे हो ?

सोचो :– कितने बड़े–बड़े धनी–मानी–ऐश्वर्यवान और कीर्तिमान व्यक्ति चले गये। क्या उनके साथ यहाँ की एक भी चीज गई ? फिर क्यों इन नश्वर चीजों के संग्रह की चिन्ता में अपना बहुमूल्य जीवन खो रहे हो ?

याद करो :– तुम्हारे पिता–पितामाह का घर में कितना रोब–दाब था। घर के सब लोग उनसे संकोच करते थे, डरते थे उनकी आज्ञा के विरुद्ध कोई चूँ तक नहीं करता था। आज कहाँ है उनका वह प्रभुत्व ? उनकी कोई याद भी नहीं करता। यही दशा तुम्हारी होगी। फिर क्यों इन चीजों के लिए पागल हो रहे हो।

देखो :– तुम्हारा यह यौवन, यह रूप, यह पद, यह मान–सम्मान और यह धन सदा नहीं रहेगा। यह सभी वस्तुएँ नष्ट होने वाली हैं और तुमसे निश्चय ही इनका वियोग होगा। फिर क्यों इनके चक्कर में पड़कर पिस रहे हो ?

सोचो :– यहाँ की दो दिन की जिन्दगी में तुम्हारा बड़ा नाम हो गया या लोग तुम्हें बहुत मानने लगे तो क्या हुआ। तुम्हारा यह शरीर और यह नाम– जिसको लोग पूजते हैं और मानते हैं, कितने दिन का है? फिर क्यों इस नाम–रूप की प्रतिष्ठा में अपने लक्ष्य से भटकते हो ?

चेतो :– शीघ्र चेत्तो। कहीं जीवन के दिन यूँ ही असावधानी में बीत गये तो फिर पछताने से कुछ भी काम नहीं निकलेगा।

देखो :- अब तक जो भूल हो गयी, सो हो गयी उसके लिए रोने से, पछताने से कोई लाभ नहीं है। जीवन के जितने दिन बाकी हैं, उन्हीं को दृढ़ संकल्प करके भगवान के भजन में लगाकर जीवन को सफल कर लो।

सोचो :- जब तक शरीर स्वस्थ्य है, इन्द्रियाँ सशक्त हैं तथा बुद्धि काम देती है, तभी तक तुम इन्हें अपने लक्ष्य की ओर लगाकर जीवन को सफल करने का प्रयत्न कर सकते हो। इन सबके असमर्थ होने पर कुछ भी नहीं कर सकोगे। फिर क्यों देर कर रहे हो ?

— ● —

अपनी गल्तियों को देखो

७.२

- संसार में ऐसा कोई नहीं है, जिसमें कोई दोष न हो अथवा जिसने कभी कोई गलती न की हो।
- अपनी गल्तियों और दोषों को देखो और उन्हें सुधारने का सत प्रयास करो। दूसरों की गल्ती देखकर उन्हें सुधारने की चेष्टा मत करो। पहले अपना सुधार करो।
- दूसरों को देखना हो तो उन्हें उन्हीं के दृष्टिकोण से और उन्हीं की परिस्थिति में पहुँचकर देखो, फिर उनकी गल्तियाँ उतनी नहीं दिखायी देंगी।
- दूसरों को बिना माँगे अनावश्यक सीख मत दो; अपनी सीख मानकर उसके अनुसार बनना सीखो।
- प्रतिक्षण अपने को देखते रहो, जरा सा भी दोष दिखायी दे तो उसे निकालने की कोशिश करो। जब तुम सचमुच सुधर जाओगे तो तुम्हारा जीवन, बिना बोले ही, दूसरों को सीख देगा।
- दूसरे लोगों के साथ वैसा ही बर्ताव करो जैसा तुम दूसरों से अपने लिए चाहते हो। सबके गुण देखो और नम्रता के साथ उन्हें ग्रहण करते चले जाओ।
- सच्ची कमाई है सद्‌गुणों का संग्रह। संसार का प्रत्येक प्राणी किसी न किसी सद्‌गुण से सम्पन्न है। गुण देखोगे गुण पाओगे, दोष देखोगे दोष मिलेगा। दूसरों में दोष ही दोष देखने वाला दोषों का समुद्र बन जाता है।
- याद रखो :— तुम जो कुछ दोगे, वहीं तुम्हें एक बीज के असंख्य फल की भांति बहुत बड़े परिणाम में वापस मिल जायेगा। सुख चाहते हो, सुख दो; प्रेम चाहते हो, प्रेम का दान करो; अपना हित चाहते हो, सबके हित की बात सोचो, सम्मान चाहते हो, सबका सम्मान करो।

— ● —

७.३
सच्चा सुधार

याद रखो :–

- विश्व के रूप में साक्षात् भगवान ही प्रकट हो रहे हैं।
- इसलिये तुम किसी से घृणा न करो, किसी का कभी अनादर मत करो, किसी का अहित मत चाहो।
- सबका सम्मान करो, सबका हित चाहो, सबसे प्रेम करो।
- किसी को नीच, पतित या पापी मत समझो। किसी को छोटा मत समझो।
- जिसे तुम नीच, पतित या पापी समझ रहे हो, उसमें भी तुम्हारे वही भगवान विराजमान हैं, जो तुम्हारे स्वयं के तथा महात्मा–ऋषियों के हृदय में हैं।
- किसी की निन्दा न करो, किसी की निन्दा न सुनो।
- निन्दा सुननी हो तो अपनी सुनो और अपना सुधार करो।
- दूसरों के सुधार का ठेका मत लो। न अपने मत को सर्वथा उपकारी समझकर किसी पर लादने का हठ करो।
- सच्चे सुधारक तो भगवान हैं, जो प्रकृति के द्वारा निरन्तर ध्वंस और निर्माण के रूप में सुधार करते रहते हैं।
- थोड़े से जीवन में इतना समय ही कहाँ है जिसको परचर्चा अथवा परनिन्दा में खर्च किया जाय। तुम्हें तो अपनी उन्नति के कामों से कभी फुरसत ही नहीं मिलनी चाहिए।

- डरो पाप से, अभिमान से, ममता से, कामना से, क्रोध से, लोभ से, सम्मान से, प्रशंसा से, ख्याति से, पूजा से, पदवी से, विलासिता से, वाद–विवाद से, परचर्चा से, परनिन्दा से, चुगली से, परधन से, परस्त्री से, और इनसे यथा साध्य बचते रहो।
- अपनी समझ से कोई बुरा काम न करो, बुरी नीयत मत रखो, फल बुरा हो तो शोक न करो। फल तो विधाता के हाथ है। सदा न किसी को सफलता मिलती है, न असफलता।
- तुम अपना काम करो, विधाता के विधान को पलटने की व्यर्थ चेष्टा मत करो।

यही सच्चा सुधार है

— ● —

७.४

तीन बातें

- तीन बातों से सदा बचो– अपनी तारीफ, दूसरे की निन्दा और पर दोष दर्शन।
- तीन बातें सदा करो– ईश्वर का स्मरण, दूसरों का सम्मान और अपने दोषों को देखना।
- तीन बातों से सदा अलग रहो– परचर्चा से, वाद–विवाद से और नेतागीरी से।
- तीन पर दया न करो– अपने पाप पर, आलस्य पर, उच्छृंखलता पर।
- तीन से सच्चे रहो– धन से, काछ से और जबान से।
- तीन से सदा डरते रहो– अभिमान से, दम्भ से और लोभ से।
- तीन को सदा हृदय में रखो– दया, क्षमा, और विनम्रता।
- तीन व्रतों का पालन करो-- पर–स्त्री सेवन का त्याग, पर–धन का त्याग और असहायों की सेवा।
- तीन का भरण–पोषण करो– माता–पिता, स्त्री–बच्चे और दीन–दुःखी।
- तीन की आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान दो--मूक प्राणि (पशु–पक्षी–कीट), संसार त्यागी संन्यासी और कुछ भी न माँगने वाले अतिथि।
- तीन कामों में खूब जल्दी करो– भजन में, दान में और शास्त्र के अभ्यास में।
- तीन कामों को ढील में छोड़ दो– मुकदमे बाज़ी को, विवाद को और किसी के दोष–निर्णय को।

- तीन आवेशों के समय संयम (धैर्य–विवेक) रखो– क्रोध के समय, काम वासना के समय और लोभ के समय।
- तीन का सम्मान करो– वृद्ध का, ब्राह्मण का और निर्धन का।
- तीन कामों को खूब मन लगाकर करो– भजन, भगवान का ध्यान और सत्संग।
- तीन से घृणा न करो– रोगी से, आर्त से और नीची जाति वाले से।
- तीन से घृणा करो– पाप से, अभिमान से और अपने मन की मलिनता से।
- तीन पर विश्वास करो– भगवान की दया (कृपा) पर, आत्मा की शक्ति पर और सत्य शुद्ध आचरण पर।
- तीन पर आस्था न रखो– कूटनीति पर, दुराचार और असत्य पर।
- तीन बातों को देखो– अपने दोष, दूसरों के गुण और महात्माओं के त्यागपूर्ण आचरण।
- तीन बातों को न देखो– अपने गुण, दूसरों के दोष और जीवों की रति क्रिया।
- तीन से सदा स्नेहपूर्ण व्यवहार करो– अपनी पत्नी से, अपने अधीनस्थ कर्मचारी से और गरीबों से।
- तीन बातों को गुप्त रखो– साधन, धन, और मैथुन।
- तीन बातें प्रकट कर दो– अपने पाप, दूसरों के गुण और परोपकार के साधन।
- तीन को पाकर कभी न फूलो– मान, पर निन्दा और अपनी बड़ाई।

—●—

७.५

अवसर हाथ से मत जाने दो

याद रखो :– तुम संसार में अकेले आये हो और अकेले ही जाओगे। यहाँ की न तो कोई चीज तुम्हारे साथ जायेगी और न कोई आत्मीय स्वजन ही जायेगा।

याद रखो :– आज घर/परिवार/समाज/देश में तुम्हारी बड़ी आवश्यकता है। तुम भी ऐसा मानते हो कि मुझसे ही सारा काम चलता है, मेरे न रहने पर काम कैसे चलेगा? पर तुम्हारे न रहने पर अथवा मरते ही कोई न कोई व्यवस्था हो जायेगी और कुछ दिनों बाद तो तुम्हारे अभाव का स्मरण भी नहीं होगा।

याद रखो :– तुम व्यर्थ ही आसक्ति तथा ममता के जाल में फँस रहे हो और मानव–जीवन के असली ध्येय को भूलकर, जिससे एक दम सारा सम्बन्ध छूट जायेगा और कभी उसकी याद भी नहीं आयेगी, उसी में मन को फँसाकर, जीवन को अधोगति की ओर ले जा रहे हो।

याद रखो :– जब तक तुम यह सोचते रहोगे कि अमुक परिस्थिति आने पर भगवान का भजन करूँगा, तब तक भजन बनेगा ही नहीं, परिस्थिति की कल्पना बदलती रहेगी, अतएव तुम जिस परिस्थिति में हो, उसी में भजन आरम्भ कर दो। भजन होने लगने पर परिस्थिति आप ही अनुकूल हो जायेगी।

याद रखो :– भजन में मन लगने पर संसार के बन्धन स्वमेव शिथिल हो जायेंगे। भगवान में ममता और असक्ति हो जायेगी, तब घर–परिवार, धन–सम्पत्ति, यश–मान, आदि की बेड़ियाँ (बन्धन) अपने–आप कट जायेंगी। फिर इसके लिये कोई अलग प्रयास नहीं करना पड़ेगा।

याद रखो :– जगत से भागने की चेष्ठा करोगे, इसे छोड़ना चाहोगे तो और भी जकड़ोगे। इसे छोड़ने का प्रयत्न छोड़कर भगवान में मन लगाने का सब प्रकार से प्रयत्न करो।

याद रखो :– मानव–जीवन अजगरों की भाँति लंबे काल तक नहीं रहता अतएव बुढ़ापे की प्रतीक्षा न करके तुरन्त भगवान में मन लगाओ। किसी विशेष परिस्थिति या अवसर की प्रतीक्षा मत करो। यह अवसर हाथ से निकल गया तो पीछे सिवा पछताने के कोई भी उपाय नहीं रह जायेगा।

— ● —

७.६

भगवान की प्रसन्नता के साधन

याद रखो :– मानव जीवन बहुत थोड़े काल के लिये प्राप्त है और प्राप्त हुआ है भगवान को प्रसन्न करके उनको प्राप्त करने के लिये।

याद रखो :– जगत में जितने भी प्राणी हैं, सबके अन्दर आत्मा तथा अन्तर्यामी रूप से भगवान विराजमान है। भगवान ही उन सब रूपों में प्रकट है। अतएव उनकी सेवा करना, उन्हें सुख पहुँचाना और उनका हित करना तुम्हारा धर्म है।

याद रखो :– यदि तुम जगत के प्राणियों के साथ द्वेष–द्रोह करते हो, कठोर वचन कहकर उन्हें मर्म – पीड़ा पहुँचाते हो, क्रोध तथा अभिमान के वश होकर उनका अपमान–तिरस्कार करते हो तो तुम्हारे बाहरी पूजन और दान से भगवान कभी प्रसन्न नहीं होंगे।

याद रखो :– भगवान की प्रसन्नता के लिये किसी बाहरी आडम्बर की, वेश–भूषा की, बोल–चाल के ढंग की, उपदेश–आदेश देने की, किसी प्रकार का स्वाँग बनाने की अथवा साधू बनने की आवश्यकता नहीं है।

भगवान की प्रसन्नता के लिये तो चाहिये – निर्मल मन, जिसमें अहिंसा, सत्य, अलोभ, संतोष, दया, अदम्भिता, वैराग्य, प्रेम, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, नम्रता, उदारता, मधुरता, गम्भीरता, सहिष्णुता, श्रद्धा, धर्मभीरुता, क्षमा आदि गुण भरे हों और सबसे प्रधान रूप में चाहिये– भगवान के प्रति मन में विशुद्ध भक्ति।

—●—

७.७
त्याग से सुख– शान्ति

याद रखो :– संसार के भोगों में सुख है ही नहीं। सच्चा और स्थायी सुख तो है– भगवान में और भगवान की प्राप्ति होती है त्याग से।

याद रखो :– जो वस्तु अनित्य, परिवर्तनशील और अपूर्ण है, उससे कभी सच्चा और स्थायी सुख नहीं मिल सकता। इसीलिये आज जो किसी भोग सामग्री से, धन से, मान से, संतान से, अपने को सुखी मानता है, वही कल रोता–विलपता देखा जाता है।

याद रखो :– त्याग में पहले–पहले कुछ कठिनाई लगती है, इसी से मन उससे भागना चाहता है, परन्तु गहराई से देखने पर स्पष्ट होता जाता है कि जितनी कठिनाइयाँ, जितने क्लेश और जितनी पीड़ा भोग पदार्थों की प्राप्ति के साधनों में और प्राप्त होने पर उनके संरक्षण में है, उतनी त्याग में कदापि नहीं है।

याद रखो :– भोगों से कभी न पूरी होने वाली भयानक इच्छा, कामना और वासनाएँ उत्पन्न होती हैं तथा परिणाम में अशान्ति प्राप्त होती है। इसके विपरीत त्याग से जीवन में शान्ति मिलती है और शान्ति से मनुष्य परमानन्द स्वरूप परमात्मा का साक्षात्कार करता है।

—●—

७.८

एकमात्र प्रभु के शरण हो जाओ

याद रखो :– संसार में तुम्हारे लिये जो कुछ हो रहा है, सब दयामय, प्रेममय और न्यायकारी भगवान की सुनिश्चित वयवस्था के अन्तर्गत उन्हीं के मंगल विधान से हो रहा है।

याद रखो :– भगवान तुम्हारा परम सुहृद है; सर्वज्ञ है और सर्वशक्तिमान है। उनके समान या उनसे बढ़कर तुम्हारा कल्याण चाहने वाला, किस बात में तुम्हारा यथार्थ कल्याण है, इस रहस्य को जानने वाला और कल्याण करने वाला दूसरा कोई नहीं है, इस बात पर विश्वास कर लोगे तो तुम्हें तुरन्त शान्ति मिल जायेगी।

याद रखो :– जो कुछ भी दुःख, अशान्ति और पाप है, सब कामना में है। कामना का मूल है आसक्ति और आसक्ति का मूल है इस शरीर तथा नाम में मेरे का भाव।

याद रखो :– भगवान की अनन्य शरणगति ऐसा महान साधन है, जो मनुष्य को सारे पाप–तापों से मुक्त करके अनायास ही परम शान्ति का अधिकारी बना देता है, अतः सारी आशाओं और सारे भरोसों को छोड़कर एकमात्र प्रभु के शरण हो जाओ।

—●—

जीवन को सफल और सुखी बनाए (कैसे ?)

1. व्यवहार कुशल बनें :—

- पड़ोसियों के साथ मैत्रीभाव रखें। बच्चों के साथ प्रेम करें और उनको उत्साहित करें। अपने से सब छोटों पर कृपा दृष्टि रखें।
- दूसरों के साथ वही बर्ताव करें, जो आप अपने लिये दूसरों से चाहते हैं। अपने वचन का पालन करें।
- ध्यान रखें कि कोई आपकी लम्बी वार्ता से उकता तो नहीं गया।
- रोगियों की सेवा करें, दीन—दुखियों के काम आएँ।
- अपने सम्पर्क में आने वाले सब के लिये आपका जीवन कल्याण का दाता हो।
- अतिथि सत्कार की भावना उत्पन्न करें, सच्चे साधु—सन्तों को निमन्त्रित करें और उनसे लाभ उठाएँ।
- मनुष्य पहचाना जाता है उस संगति से, जिसमें वह विचरता है और उन पुस्तकों से जो वह पढ़ता है।

2. आचार के धनी बनें :—

- चरित्र सबसे बड़ा धन है।
- सत्य बोलें।
- बात बढ़ा—चढ़ाकर न करें।
- नम्रता और मधुर वाणी आपके भूषण हों।
- सब के साथ, कृपा भाव रखें।
- अनुपस्थित की निन्दा से बचें।
- विश्वास करें और विश्वास पात्र बनें।
- किसी की हाँ में हाँ मत मिलाएँ, खरी बात कहने की हिम्मत जुटाएँ, परन्तु युक्ति से और कल्याण की भावना से।

3. अपने चार पैसों से खेलिये मत :—

- अपनी सामर्थ्य के अनुसार खर्च करें।
- दिखावे के लिये अनावश्यक खर्च से बचें।
- जैसे–तैसे ढंग से धन संग्रह को ही जीवन का लक्ष्य न बना लें।
- सन्तोषी बनें।
- जीवन को सुखी बनाने वाले उचित खर्चों में कंजूसी न करें।
- अपनी आय बढ़ाने के लिए धर्मयुक्त पुरुषार्थ करें।
- अपने सेवकों को खुले दिल से दें।
- अपने मित्रों एवं स्नेह पात्रों को उचित अवसरों पर उपहार दें।
- दुःख–सुख के लिये कुछ बचा कर रखें।
- दान देना (सुपात्र को) धन का सर्वोत्तम उपयोग है।
- धन को द्रव बनायें, अर्थात् धन का उचित उपभोग करें।
- जिसके पास केवल धन है; वह सबसे बड़ा निर्धन है अर्थात् धन का अनावश्यक संचय न करें।

— ● —

७.१०

कुछ अन्य महत्वपूर्ण जीवनोपयोगी बातें

१. यदि आप अपने माता–पिता का आदर करेंगे तो आपके बच्चे भी आपका आदर करना सीखेंगे।

२. दूसरे मनुष्यों से जैसा व्यवहार आप अपने लिए पसन्द करते हैं वैसा ही व्यवहार यदि आप दूसरों के साथ करें तो आपका जीवन बदलकर स्वर्ग बन सकता है। सामने वाले के स्थान पर अपने को रखकर जरा से सोचने की आदत डालें यानि मैं उसकी जगह होता तो क्या करता तो बहुत सी विकट समस्याओं का समाधान स्वतः ही मिल जायेगा और साथ ही अनावश्यक तनाव से मुक्ति भी।

३. किसी को भी बिना माँगे और अनावश्यक सलाह देने और बात–बात पर टोकने की आदत त्याग दें। इस तरीके से किसी व्यक्ति; चाहे बच्चा हो या बड़ा, में सुधार लाने की आशा करना व्यर्थ है। प्रकृति सत्संगति, महापुरुषों का जीवन और श्रेष्ठ लेखकों की प्रेरणादायक पुस्तकें ही वास्तविक प्रेरणा स्रोत है, जीवन में सुधार लाने के लिए।

४. दूसरों की बढ़ोत्तरी से अपना मिलान या कम्पेरिजन करके दुःखी मत होइए और न ही व्यर्थ की प्रतिस्पर्धा में उतरकर होश खोइए। प्रतिस्पर्धा का कहीं अन्त नहीं है। ईर्ष्या एवं दूसरों को सुखी देखकर दुःखी होने का स्वभाव मानसिक तनाव और अनेकानेक रोगों का कारण बनता है जबकि दूसरों को सुखी देखकर आनन्दित होने का मजा अपने आपमें किसी स्वर्गिक सुख से कम नहीं है।

५. अपनी उपलब्धियों को नजरअन्दाज करके व्यर्थ में दुःखी मत होइए, ''जो पास में नहीं है'' उसे देखकर निराश होने की बजाय ''जो पास में है'' उसे देखकर आप सदा आशावादिता के साथ खुशियाँ बटोरिए। सदा सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाइए। **''जैसी दृष्टि, वैसी सृष्टि''**।

६. इस सृष्टि में सभी समान नहीं हो सकते ''जैसे हाथ की पांच उंगलियाँ'' यह भेद जन्म–जन्मान्तर के शुभाशुभ कर्मों का प्रतिफल है। जैसा कोई कर्म करेगा वैसा ही उसे फल मिलेगा। अच्छे कर्मों के द्वारा इस जीवन और अगले जन्म को निखारना आपके अपने हाथ में है।

७. आवश्यकताओं को कम करने में ही सच्चा सुख छिपा है। चाह (कामनाओं को) घटाने से चिन्ताओं से मुक्ति मिलती है।

चाह गई, चिन्ता मिटी, मनुवा बेपरवाह।
हमको कछु नहीं चाहिए, हम हैं शहन्शाह।।

— ● —

याद रखें :

- जिन्दगी धन और सत्ता के संचय का नाम नहीं है बल्कि आशीर्वादों के मोतियों को एकत्र करने का नाम है। जहां धन और सत्ता की प्राप्ति के लिये शोषण और जुल्म अनिवार्य है। वहां आशीर्वादों के मोती बटोरने के लिए किसी को पीड़ित करने की नहीं बल्कि दूसरों की पीड़ा हरने की जरूरत रहती है।
- सच्चा सुख अनन्त इच्छाओं की पूर्ति के पीछे भागने का नाम नहीं है, बल्कि जीवन में सादगी, संतोष और सदाचरण अपनाने का नाम है।
- सच्चा धर्म दिखावे और आडम्बर का नाम नहीं है बल्कि मानव–सेवा और त्याग–भावना द्वारा दीन–दुखि:यों के आँसू पोंछने और प्यार बाँटने का नाम है।

बड़े भाग मानुष तन पावा

बड़े भाग मानुष तन पावा। सुर–दुर्लभ सद् ग्रन्थन्हि गावा।।
पुनर्वित्तं, पुनर्मित्रं, पुनर्भार्या, पुनर्मही। एतत्सर्व पुनर्लभ्यं, नशरीरं पुनःपुनः।।
शरीर माद्यं खलु धर्म साधनम। धर्मार्थकाम मोक्षाणः आरोग्यं मूल मुत्तमम्।।

अर्थात् मानव–देह का मिलना अत्यन्त दुर्लभ है जो कि अनेक जन्मों के संचित पुण्यों और शुभ–कर्मों का फल है।

इसी शरीर से मानव जीवन के चारों पुरुषार्थ–धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति सम्भव है। जिसके लिये, मानव जीवन के सात सुखों में प्रथम, शरीर का निरोग रहना आवश्यक है।

सात सुख

पहला सुख निरोगी काया, दूजा सुख घर में हो माया।
तीजा सुख सुलक्षणा नारी, चौथा सुख पुत्र आज्ञाकारी।
पंचम् सुख स्वदेश में वासा, छठवाँ सुख राज में पासा।
सातवाँ सुख संतोषी जीवन, ऐसा हो तो धन्य है जीवन।

हितभुक, मितभुक, ऋतभुक

अर्थात् जीने के लिए हितकर भोजन खाओ।
भूख से थोड़ा कम खाओ।
नेकी और हक की कमाई का खाओ।
क्योंकि जैसा खाये अन्न वैसा होगा मन।
जीने के लिये खाओ, खाने के लिए मत जियो।
हितकर भोजन का सूत्र है
जो जुड़ै, जो रुचै, जो पचै

अर्थात्

- जो जुड़ सके (अर्थात् जो सामर्थ्य अनुसार उपलब्ध हो सके)
- जो रुचै (अर्थात् सामर्थ्य अनुसार उपलब्ध भोजन में जो रुचिकर लगे)
- जो पचै (अन्ततः हितकर भोजन वह है जो सामर्थ्य अनुसार उपलब्ध व रुचिकर भोजन सामग्री में से आपको ठीक तरह पच सके)

७ .११
प्रार्थना

- मो सम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुबीर।
  अस बिचारि रघुबंस मनि हरहु बिषम भव भीर।।

हे श्री रघुवीर ! मेरे समान कोई दीन नहीं है और आपके समान कोई दीनों का हित करने वाला नहीं है। ऐसा विचार कर हे रघुवंशमणि ! मेरे जन्म–मरण के भयानक दुःख का हरण कर दीजिये।।

- कामिहि नारि पिआरि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
  तिमि रघुनाथ निरन्तर प्रिय लागहु मोहि राम।।

जैसे कामी को स्त्री प्रिय लगती है और लोभी को जैसे धन प्यारा लगता है, वैसे ही हे रघुनाथ जी ! हे राम जी ! आप निरन्तर मुझे प्रिय लगिये।

- नाथ एक बर मागउँ राम कृपा करि देहु।
  जन्म जन्म प्रभु पद कमल कबहु घटै जनि नेहु।।

हे नाथ ! हे श्री राम जी ! मैं (चन्द्र कुमार) आपसे एक वर माँगता हूँ कृपा करके दीजिये। प्रभु (आप) के चरण कमलों में प्रेम जन्म–जन्मान्तर में कभी न घटे।।

— ● —

सफलता के 10 सूत्र

१. **स्वप्न** – सफलता की शुरुआत स्वप्न देखने से आरंभ होती है।

२. **स्थायी सफलता** – सफलता तभी स्थायी हो सकती है जब इसकी बुनियाद कुछ मूल्यों पर टिकी हो। यह तय करना बहुत जरूरी है कि आप किस योग्य हैं और जल्द यह तय करने के बाद किसी भी कारण से इस पर समझौता नहीं करना चाहिये।

३. **उत्साह और उत्सुकता** – कभी उत्साह और उत्सुकता की कमी अपने में नहीं होने देना चाहिये।

४. **निरन्तर प्रयास** – आने वाले कल के लिये अपने क्षेत्र में सिर्फ अच्छे होने से काम नहीं बनने वाला, हमें अपने क्षेत्र में निरन्तर उठते जाना होगा।

५. **आत्मविश्वास** – सफलता का प्रमुख कारण है। आत्मविश्वास का अर्थ है विपरीत परिस्थितियों में भी सकारात्मक दृष्टिकोण बनाये रखना। आत्मविश्वासी लोग शुरुआती असफलताओं को अपने ऊपर प्रभावी नहीं होने देते।

६. **टीमवर्क** – सफलता के लिये टीमवर्क प्रमुख है। आज चुनौतियाँ इतनी जटिल हैं कि केवल व्यक्तिगत स्तर पर उनसे नहीं लड़ा जा सकता।

७. **शारीरिक स्वास्थ** – सफलता के लिये सबसे बड़ी जरूरत है।

८. **सिद्धान्तों पर अडिग रहना** – सफलता के लिये विपरीत परिस्थिति में भी सिद्धांतों पर अडिग रहना चाहिये।

९. **सामाजिक जिम्मेदारी** – आर्थिक लाभ आवश्यक है पर उसका उपयोग समाज के बेहतर भविष्य के लिये भी होना चाहिये।

१०. **विनम्रता** – हासिल की गई सफलता को अपने ऊपर हावी नहीं होने देना चाहिये (इससे विनम्रता बनी रहती है)।

अज़ीम हाशिम प्रेम जी
साभार
दैनिक जागरण

।। श्री सीताराम ।।

सीताराम, सीताराम, सीताराम कहिए।
जेहि विधि राखै राम, तेहि विधि रहिए।।

लेखक (संकलनकर्ता) ने "श्रीराम भक्ति सागर" के माध्यम से जनमानस (विशेषकर, व्यस्त नवीन पीढ़ी) को सुखी जीवन जीने का जो सरल मार्ग (ज्ञान) दिया है, वह सचमुच ही प्रशंसनीय है।

अपने अनुभव के आधार पर श्री चन्द्र कुमार गुप्ता ने यह "श्रीराम भक्ति सागर" नामक सुन्दर संकलन आपके समक्ष प्रस्तुत किया है, वह निश्चय ही आधुनिक समाज को सफल जीवन जीने के मार्ग में उपयोगी सिद्ध होगा।

मुझे विश्वास है कि इस पुस्तक के माध्यम से पाठक अधिकाधिक लाभान्वित होंगे।

— प्रकाशिका

आत्म-परिचय

नाम	: चन्द्र कुमार गुप्ता
जन्म	: 03 अक्टूबर, 1949
जन्म स्थान	: बदायूँ, उत्तर प्रदेश
माता-पिता	: श्रीमती राम सुमरनी देवी एवं स्व० श्री राम भरोसे लाल
शैक्षिक योग्यता	: बी.एस.सी., (आगरा विश्वविद्यालय) बी.ई., (गोरखपुर विश्वविद्यालय)
सम्प्रति	: उत्तर प्रदेश पावर कारपोरेशन लिमिटेड में अधीक्षण अभियन्ता।
प्रकाशित ग्रन्थ	: प्रथम पुस्तक 'श्रीराम भक्ति सागर'
प्रयासरत	: 'भारत 2047 शान्ति दूत एवं विश्व शक्ति'
जीवन सार	: 'तुलसी इस संसार में, तीन वस्तु है सार। सत्संगति, हरिभजन और निशिदिन पर उपकार।।1।। तुलसी साथी विपत्ति के, विद्या, विनय, विवेक। साहस, सुकृत सत्यव्रत, राम भरोसो एक।।2।।

पुस्तक में दिये विचार तथा की गयी आलोचनायें लेखक (संकलनकर्ता) की जिम्मेदारी होगी और कारपोरेशन का इस पुस्तक के प्रकाशन से कोई भी सम्बन्ध नहीं है।